अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

मूल्य : 5.00
अंक : 01
16-31 अगस्त, 2013
वर्ष : 37

यह तो डेमॉक्रेसी का ढोंग है

मिट्टी का रूपान्तरण दूध में नहीं हो सकता, तो डेमॉक्रेसी का रूपान्तरण फौजी सत्ता में कैसे हो सकता है! इसलिए सही बात यह है कि आज असलियत में डेमॉक्रेसी है ही नहीं। इस समय डेमॉक्रेसी हो या वेलफेयरिज्म, कम्युनिज्म हो या सोशल्जिम, सबका आधार है–फौज। सबका रक्षण करनेवाला एक ही देवता (फौज) है, वहां सारे एक ही हैं। वे चाहे आपस में लड़ें, लेकिन उनमें कोई भेद नहीं है। उनमें से कोई भी आज हिंसा पर नियंत्रण करना चाहे, तो उसमें सफल नहीं हो सकता, क्योंकि उन सबका दारोमदार फौज पर है और सारी सत्ता चंद लोगों के हाथ में है। कभी सत्ता एक के हाथ में रहेगी, कभी दूसरे के। जनता बेचारी अपना नसीब आजमाती रहेगी। यह जो डेमॉक्रेसी का एक प्रकार का ढोंग चल रहा है, उससे मुक्ति हासिल करनी होगी और जनता की शक्ति बनानी होगी। तभी शांति हासिल होगी।

(जम्मू, 10 सितम्बर, 1959)

–विनोबा

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
वर्ष : 37, अंक : 01
16-31 अगस्त, 2013
सर्व सेवा संघ
द्वारा प्रकाशित
अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

संपादक
बिमल कुमार
मो. 9235772595
प्रसार व्यवस्थापक
उमेश कुमार

मूल्य : पांच रुपये
शुल्क
वार्षिक : 100 रुपये
आजीवन : 1,000 रुपये

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-221 001 (उ.प्र.)
फोन व फैक्स : 0542-2440385, 2440223, मो. 9453047097
ईमेल: sarvodayajagat@gmail.com
sarvodayavns@yahoo.co.in

विज्ञापन दर
पूरा पृष्ठ : 2000 रुपये
आधा पृष्ठ : 1000 रुपये
चौथाई पृष्ठ : 500 रुपये

अंदर के पृष्ठों पर...

1. हर मजहब की छाँव... 2
2. शिक्षा और समुदाय... 3
3. लोक-सेवकों से... 4
4. खादी आजादी का वस्त्र... 7
5. आग लगने पर कुआँ... 9
6. जैविक खेती एक जीवन... 11
7. कट्टरतावाद और... 12
8. सत्याग्रह ने रोकी जल... 14
9. नई तालीम पाठ्यक्रम... 17
10. गतिविधियां एवं समाचार... 18
11. कविताएं.... 20

कविता

हर मज़हब की छाँव मुबारक

–शक्ति कुमार

दिल में ख़ुदा की दीद मुबारक
हर साथी को ईद मुबारक!

हर मजहब की छाँव मुबारक
आजादी की नाव मुबारक
सबको अपनी रीत मुबारक
हर साथी को ईद मुबारक !

गांधीजी का राम मुबारक
अण्णा का पैगाम मुबारक
लोकतंत्र की जीत मुबारक
हर साथी को ईद मुबारक!

सब मुल्कों का मेल मुबारक
ओलिम्पिक का खेल मुबारक
किसिम-किसिम के गीत मुबारक
हर साथी को ईद मुबारक!

वैलेन्टाइन फूल मुबारक
छोटी-मोटी भूल मुबारक
धक-धक करती प्रीत मुबारक
हर साथी को ईद मुबारक!

ऋषियों जैसा होश मुबारक
युवाजनों का जोश मुबारक
बूढ़ों की ताकीद मुबारक
हर साथी को ईद मुबारक!

दिल में ख़ुदा की दीद मुबारक
हर साथी को ईद मुबारक!

❑

संपादकीय

शिक्षा और समुदाय

आजकल स्कूलों को समुदाय से जोड़ने की बात चल रही है। वैसे तो यह बात बहुत पहले से कही जा रही है। लेकिन शिक्षा के अधिकार के अंतर्गत भी इसे ले आने के कारण यह पुनः एक बार चर्चा का कारण बन गया है। सरकारी स्कूलों एवं शिक्षा-प्रशासन द्वारा इसे क्रियान्वित करने का स्वांग किया जा रहा है।

इसमें तो कोई विवाद है ही नहीं कि स्कूलों एवं समुदायों के बीच जीवंत अन्तःसंबंध विकसित हों। इससे दोनों को शक्ति मिलेगी। स्कूल को संसाधन मिलेंगे, स्कूल स्वावलंबी बन सकेंगे तथा बच्चों के व्यक्तित्व के निर्माण में स्कूल तथा समुदाय सह-क्रियाशील हो सकेंगे।

दूसरी ओर समुदाय अपने स्कूल के माध्यम से अपने को नयी तरह से खोजता एवं समझता जायेगा, आगे बढ़ने के रास्ते तलाशता जायेगा, भविष्य के नागरिकों का निर्माण करता जायेगा तथा अपने बुनियादी मूल्यों की नींव मजबूत करता जायेगा। स्कूल एक सामाजिक पूंजी का भी निर्माण करता जायेगा, जिसमें परस्पर विश्वास एवं परस्पर सहयोग बढ़ेगा। समुदाय के लोग जब स्कूल के प्रति सचेत होंगे तो स्कूलों की गुणवत्ता में भी सुधार होगा तथा वे और अधिक उत्तरदायी बन सकेंगे।

इस प्रकार स्कूल-समुदाय के अन्तःसंबंधों का विकास, शिक्षक-अभिभावक संवाद से कहीं आगे की प्रक्रिया है। शिक्षा व्यक्ति की भी आवश्यकता है तथा समाज की भी आवश्यकता है। इसी कारण समुदाय के सक्रिय जुड़ाव के बिना शिक्षा महज एक सूचना या जानकारी प्रेषित करने का माध्यम बनकर रह जायेगी।

इस तथ्य को ध्यान में रखना होगा कि माध्यमिक स्तर तक शिक्षा का अर्थ बच्चों को सिखाना भी है तथा उनमें मूल्यों की प्रतिष्ठा भी करनी है। किताबी ज्ञान एवं मूल्य मिलकर ही शिक्षा बनते हैं। उच्च शिक्षा केवल प्रोफेशनल हो सकती है, लेकिन बच्चों की नहीं।

यहां एक बात ध्यान में रखने की है। सरकार द्वारा संचालित स्कूल उस व्यवस्था के अंग हैं, जिन्हें हम औपचारिक कहते हैं। स्कूल तथा उसका प्रबंधन भी सरकारी तंत्र का एक हिस्सा है। राज-व्यवस्था के समान ही इसकी भी एक श्रेणीबद्ध व्यवस्था है। एक आधुनिक पूंजीवादी समाज की इकाइयों के समान इस इकाई का भी संचालन होता है। मोटे तौर पर राज-व्यवस्था के लक्ष्यों एवं पूंजीवादी समाज के लक्ष्यों के लिए जैसे नागरिकों के निर्माण की आवश्यकता होती है, उसकी आधारशिला इन स्कूलों में रखी जाती है। एक राष्ट्रीय मानकीकरण या समदृश्यता भी इन स्कूलों में है तथा ये केन्द्र निर्देशित हैं।

दूसरी ओर समुदायों का स्वरूप एवं संगठन, उनकी संस्कृति एवं उनके मूल्य इस व्यवस्था से बिलकुल भिन्न रहे हैं। समुदाय परम्परा से चलने वाली सामाजिक इकाइयां हैं, जो एक समग्रता में आवेष्ठित रहती है। इस प्रकार समुदाय मूलतः संस्कृति एवं परम्पराओं की निरंतरता में स्वयं को प्रकट करते जाते हैं। इनका लोक-जीवन—लोक-संस्कृति केन्द्रित होता है, लेकिन इनके मूल्यों का स्रोत एक ब्रह्माण्डिक विश्व-दर्शन होता है। इसी कारण इसमें इहलौकिकता एवं ईश्वरीय पावनता (Divine Holiness) का विच्छेदन संभव नहीं होता। राष्ट्रीय स्तर पर समुदायों में वैभिन्य है, बहुल-स्वरूपता है।

दूसरी बात यह कि इन समुदायों का जीवन-आधार प्राकृतिक स्रोत रहे हैं, जैसे जल, जंगल, जमीन, खनिज आदि। आज के समुदाय ऐसे भी शोषण व दोहन के शिकार हैं तथा इनका शोषण व दोहन वही व्यवस्था कर रही है, जो इन स्कूलों का संचालन व पोषण कर रही है।

ऐसे में, स्कूलों व समुदाय के बीच किस प्रकार के अन्तःसंबंध विकसित हो सकते हैं। दो प्रकार की संभावनाएं हैं। एक तो यह कि स्कूल स्वयं जिस व्यवस्था की उपज हैं, वे उसी मानसिकता से काम करें। अर्थात् समुदायों में ऐसा परिवर्तन करने का माध्यम बनें, जिसके परिणामस्वरूप समुदाय भी उस व्यवस्था के अनुकूल बन जायें। समुदाय उन मूल्यों व व्यवस्थाओं को स्वीकार कर लें जिनके अंतर्गत उनका शोषण होता है। इसके लिए यह जरूरी है कि वे हीन भावना से ग्रस्त हों तथा यह स्वीकार कर लें कि ये स्कूल उनके लिए उद्धारक बनकर आये हैं, उन्हें सभ्य बनाने आये हैं। और, इस प्रकार समुदायों में केन्द्रीय सत्ता निर्देशित दिशा में परिवर्तन हो।

दूसरी संभावना यह हो सकती है कि शिक्षा का लक्ष्य यह हो कि इन समुदायों के मूल गुण एवं सत्त्व को पहचानें, उसे ग्रहण करें तथा उन मूल गुणों व सत्त्वों के आधार पर समुदायों के पुनर्निर्माण में सहयोग करें। शिक्षा के माध्यम से एक ऐसी सामाजिक पूंजी का निर्माण हो जिससे शोषण व दोहन को अस्वीकार करने की शक्ति उनमें आ सके। शिक्षा ऐसे कौशल को भी प्रदान करने का माध्यम बने, जिससे समाज में वैकल्पिक रचना को खड़ा किया जा सके। अर्थात् विद्यार्थी, विद्या अर्जन के बाद ऐसी विद्या में पारंगत न हों, जिसके फलस्वरूप उसे वैसी व्यवस्था में काम करना पड़े, जो उसके समुदाय का शोषण और दोहन करती है। इससे अलट, वह ऐसी विधाओं में पारंगत बनें, जिससे वह अपने समुदाय को शोषण व दोहन से मुक्त करा सकें तथा वैकल्पिक समाज-रचना के कार्य को आगे बढ़ाने का माध्यम बन सकें। इस प्रकार यह शिक्षा राजसत्ता को मजबूत बनाने के बजाय लोकसत्ता को मजबूत बनाने का माध्यम बन सके।

गांधीजी की दृष्टि वाली बुनियादी तालीम के प्रयोग इस दिशा में कुछ परिवर्तन ला सकते हैं। अतः बुनियादी तालीम के काम से जुड़े लोगों को समुदायों के साथ मजबूत जीवंत अन्तःसंबंध बनाने की दिशा में भी बढ़ना होगा।

बिमल कुमार

लोक-सेवकों से

❑ धीरेन्द्र मजूमदार

पिछले तीस साल से मेरे साथी मुझे हमेशा 'पागल' कहते रहे हैं। पागल उसे कहते हैं, जो सब लोगों से भिन्न कुछ कहता रहे। तो, मैं हमेशा पागलपन की ही बात करता हूं, फिर भी आप मेरी बात सुनते हैं। आप भी क्या करें? आपने मुझसे भी एक बड़े पागल को अपना नेता जो बना रखा है। उसने तो ऐसी बात कह डाली, जो इतिहास में कहीं न थी। उसने इतना बड़ा आन्दोलन चलाने के लिए 'तंत्र-मुक्ति' और 'निधि-मुक्ति' की बात की। क्या आपने इतिहास में कभी सुना कि किसी क्रांतिकारी नेता ने अपने आंदोलन के दौरान में ही अपने संगठन को विघटित कर दिया?

स्वधर्म-निष्ठा से ही सिद्धि : 'ये तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति क्यों और क्या?' इसे साफ-साफ समझ लेने की आवश्यकता है। जब तक हम सब इसकी आवश्यकता तथा स्वरूप के बारे में स्पष्ट नहीं समझ लेते, तब तक इस आंदोलन में वेग नहीं आ सकता। हर चीज का एक स्वभाव और स्वधर्म होता है। स्वधर्म-निष्ठा से सिद्धि-लाभ होता है। वस्तुतः गांधीजी ने दुनिया को कोई नये लक्ष्य का संदेश नहीं दिया। उन्होंने जो नयी बात कही, वह यही थी कि साध्य और साधन में समता हो। क्रांति की प्रक्रिया में यही उनकी सबसे बड़ी देन है। साधन और साध्य की एकरूपता न हुई, तो सिद्धि का भास भले ही हो जाय, पर गांधीजी की दृष्टि में वास्तविक सिद्धि-लाभ नहीं हो सकता। अतएव सबसे पहले हमें अपने साध्य को अच्छी तरह समझ लेना होगा।

तंत्र-मुक्ति तंत्र-मुक्त साधनों से ही संभव : आज केवल विनोबा ही नहीं, हम-आप सभी सर्वोदय-सेवक कहते हैं कि हमें शासन-हीन और श्रेणीहीन समाज कायम करना है। हम कहते हैं कि कांचन-मुक्ति के सिवा शासन-मुक्ति नहीं हो सकती। वस्तुतः 'शासन-मुक्त समाज' से हम कोई उच्छृंखल या अव्यवस्थित समाज नहीं समझते। शासन-मुक्त समाज भी पूर्ण रूप से व्यवस्थित समाज ही होगा। निस्संदेह ऐसा समाज 'संचालित' न होकर 'सहकारी' होगा। यह तभी संभव होगा, जब समाज के मूलकर्मी यानी उत्पादक स्वावलंबी हों। क्योंकि उनके स्वावलंबी हुए बिना समाज में एक 'व्यवस्थापक-वर्ग' की आवश्यकता रह ही जायगी, जिसकी परिणति से शासन संचालित ही रह जायगा।

'स्वावलंबन' का मतलब जैसा कि हम सब समझते हैं, वस्त्र-स्वावलंबन, अन्न-स्वावलंबन, सब्जी या दूध स्वावलंबन ही नहीं है। ये सब बातें तो उसमें हों ही। लेकिन वास्तविक स्वावलंबन तब हो सकेगा, जब मूल उत्पादक-वर्ग का नेतृत्व-स्वावलंबन और व्यवस्था-स्वावलंबन सिद्ध होगा। नेतृत्व-स्वावलंबन सधे बिना शासन-मुक्ति की सिद्धि नहीं हो सकती। केन्द्रीय-तंत्र तथा संचित निधि-संचालित कार्यक्रम में से यह नेतृत्व-स्वावलंबन निकल नहीं सकता।

आंदोलन का साधन उसकी प्रक्रिया ही है। अगर आंदोलन ही गण-सेवकत्व के नेतृत्व तथा जनता द्वारा पोषित न होगा, तो उसके द्वारा केन्द्रीय शासन या 'तंत्र' का कदापि अंत न हो सकेगा। अगर समाज को तंत्र-मुक्त करना है, तो उसका साधन भी तंत्र-मुक्त आंदोलन ही होगा। यही कारण है कि विनोबाजी ने भू-क्रांति-आंदोलन को तंत्र-मुक्त कर दिया।

'निधि-मुक्ति' का अर्थ : संचित निधि द्वारा भी अगर आंदोलन चलेगा, तो भी वह तंत्र-मुक्त न हो सकेगा, क्योंकि उस निधि के संचालन के लिए एक संचालक-मंडल की आवश्यकता रहेगी ही। केन्द्रीय संचित निधि नहीं, बल्कि जिलेवार या क्षेत्रवार विकेन्द्रित संचित निधि से भी संचालित रहते यह आंदोलन तंत्र-मुक्त न हो सकेगा, क्योंकि छोटी सत्ता या बड़ी सत्ता वास्तव में सत्ता ही तो है। अतएव निधि-मुक्ति का मतलब यह नहीं कि हम केवल गांधी-स्मारक-निधि से ही मुक्त हो जायं। बल्कि हमें सर्व-सेवा-संघ की संचित निधि, गांधी-आश्रम की संचित निधि या इस तरह की और भी दूसरी संस्थाओं की संचित निधियों का भी आधार छोड़ना होगा। हमारा आंदोलन तभी स्वधर्मनिष्ठ होगा, जब हम जनता की चालू सहायता से ही और किसी संस्था की ओर न देखकर किसी अनुभवी व्यक्ति के मार्ग-दर्शन में चलें। इसी को विनोबाजी ने 'चेतन से चेतन का संबंध' कहा है।

क्रांति-वहन संस्था के स्वभाव-विरुद्ध : आज जितनी संस्थाएं काम कर रही हैं, असलियत में वे इस क्रांति की वाहक नहीं हो सकतीं। वे सहायक मात्र हो सकती हैं। संस्थाओं के बारे में मैं अकसर एक उदाहरण दिया करता हूँ। रिक्शा, टाँगा, मोटर आदि अनेक प्रकार की सवारियां होती हैं। सवारियां बाजार नहीं करतीं, वह तो आदमी ही करता है। आदमी पैदल जाकर बाजार कर सकता है और चाहे तो किसी सवारी का भी इस्तेमाल कर सकता है। इसी तरह लोक-सेवक ही क्रांति का काम चलायेंगे। संस्थाएं सवारियों जैसी अपनी-अपनी जगह पर खड़ी रहेंगी। लोक-सेवक उन्हें क्रांति के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं, उनकी सहायता ले सकते हैं। लेकिन एक बात स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए। आप पैदल चलकर बाजार करना चाहें, तो कर सकते हैं। लेकिन रिक्शा आदि किसी सवारी पर बैठना चाहें, तो उसके चालक द्वारा मांगा हुआ किराया आपको देना होगा। आप बिना टिकट उस पर बैठ नहीं सकते। हमारे कार्यकर्ता कभी-कभी संस्थाओं के बारे में शिकायत करते हैं। उनकी शिकायत इसलिए होती है कि वे बिना टिकट सवार होना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि संस्था की कोई शर्त न हो और उसे वे इस्तेमाल करें। आखिर संस्थाएं

तंत्र-मुक्त नहीं होतीं। अगर वे ऐसी होतीं, तो वे 'संस्था' या 'संघ' ही न रह जातीं। उन्हें तंत्रबद्ध या नियम और कानून से ही चलना होगा। उनका स्वभाव और स्वधर्म वही है। लेकिन इस आंदोलन के स्वरूप में सेवक सार्वभौम और संस्था सेविका मात्र है। सेविका का मतलब यह नहीं कि वह गुलाम हो जाय। वह भी अपनी शर्त पर ही सेवा करेगी।

इस प्रकार सर्व-सेवा-संघ, गांधी-स्मारक-निधि, गांधी-आश्रम, भूदान-समिति आदि संस्थाएं अपने-अपने स्वभाव और स्वधर्म की मर्यादा के अनुरूप ही इस आंदोलन की सहायिका होंगी। इसकी मुख्य जिम्मेदारी तो तंत्र-मुक्त तथा निधि-मुक्त निष्ठावान् सत्याग्रही लोक-सेवक पर ही है।

पहले 'अप्सरा', अब अफ्सरी : एक भाई कह रहे थे : 'हमारे बड़े नेता लोग हम लोगों को तो खराद पर चढ़ाते हैं और हममें से कुछ लोगों को इधर-उधर नौकरियां दिला देते हैं।' अगर हम नेता लोग ऐसा करते हैं, तो बहुत अच्छा करते हैं। इससे आपका संरक्षण होता है। पुराण की कहानी है कि जब लोग तपस्या करते थे, तो इन्द्र महाराज उनके सामने अप्सराएं भेज दिया करते थे। जो उनके मोह में पड़ जाते थे, वे तपस्या से निकल जाते और बाकी समाज के स्तर को ऊँचा करने में लग जाते थे। अप्सरा भेजने के पीछे इन्द्र की नीयत चाहे जो हो, उस कार्य से वे समाज का बहुत बड़ा कल्याण ही करते थे। क्योंकि जो तपस्वी अपनी तपस्या के दौरान में अप्सराओं के मोह में विमोहित हो सकता है, वह अगर अपनी कमजोरियों को लेते हुए तपस्वी के रूप में समाज में विचरने लगे, तो समाज के लिए वरदान न होकर भयानक अभिशाप ही होगा। इस प्रकार इन्द्र अगर ऐसे लोगों को अपनी हरकतों से तपस्वी-समाज से अलग कर देता था, तो निस्संदेह वह समाज का बड़ा उपकार ही करता था। पुराने जमाने में तपस्वी के सामने उनकी परीक्षा के लिए अप्सराएं आया करती थीं। लेकिन आज आपके सामने अफ्सरी और अशर्फियां आती हैं। अगर आपमें से कुछ लोग उनके मोह में पड़कर हमारी मदद से ही आपके बीच से निकल जाते हैं, तो इससे इस आंदोलन का बड़ा कल्याण ही होगा। अगर वे इधर-उधर नौकरियां मांगनेवालों को मदद पहुंचाते और इस क्रांति में डटे रहने का संकल्प करनेवालों को खरादते रहते हैं, तो इससे आपको खुश ही होना चाहिए। अगर आपको दुःख या ईर्ष्या हो, तो समझना होगा कि लक्ष्य के प्रति आपकी निष्ठा में कमी है।

साधन भी शोषण-मुक्त चाहिए : अब हम शोषण-हीनता के लक्ष्य के बारे में कुछ चर्चा करेंगे। जैसे तंत्र-मुक्ति के साध्य के लिए साधन-रूप में आंदोलन की प्रक्रिया का भी तंत्र-मुक्त रहना आवश्यक है, उसी तरह शोषण-मुक्ति की लक्ष्य-पूर्ति के लिए क्रांति का साधन भी शोषण-मुक्त ही होना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए सर्व-सेवा-संघ ने गांधी-निधि या और दूसरी संचित निधियों के सहारे आंदोलन न चलाने का प्रस्ताव किया है। अब आपको अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि संचित निधि का अर्थ क्या है? केवल गांधी-स्माकर-निधि की संचित निधि नहीं, सर्व-सेवा-संघ, गांधी-आश्रम या कोई और स्थानीय संस्था की निधि भी संचित निधि है। अतः अगर आप लोगों ने इन संस्थाओं की निधि का सहारा लेने का कुछ अंश में भी सोचा हो, तो वह प्रस्ताव के अनुकूल नहीं। अतः लोक-सेवकों को निश्चित निर्णय करके इन साधनों से भी मुक्त होना चाहिए।

सम्पत्ति-दान 'तात्कालिक' साधन : सर्व-सेवा-संघ ने फिलहाल यह सुझाव रखा है कि सम्पत्ति-दान, अन्न-दान आदि साधनों को काम में लाया जाय। मैंने 'फिलहाल' शब्द इस्तेमाल किया है। क्योंकि सम्पत्ति-दान से लोक-सेवकों का गुजारा तथा आंदोलन का संगठन चलने पर वह संचित निधि भले ही न हो, लेकिन शोषण-मुक्त साधन नहीं होगा। आखिर सम्पत्ति-दान का अर्थ क्या है? मजदूरों को खटाकर, व्यवसाय चलाकर जो मुनाफा मिले, उसका एक अंश या नौकरी, वकालत आदि अनुत्पादक पेशों द्वारा प्राप्त सम्पत्ति का वह अंश मात्र ही है न? अगर इस साधन से हम अपना गुजारा करते हैं, तो कहना पड़ेगा कि शोषण के एक हिस्से का हमने आधार लिया। बहुत-से मुल्कों में और हमारे देश में भी एक विचार चलता था कि जन-कल्याण का काम चंदा मांगकर न चलाकर कुछ व्यवसाय चलाया जाय और उसके लाभ से किया जाय। उसमें जो मजदूरों का शोषण होता है, अच्छे काम में लगने के कारण वह अशुद्ध नहीं माना जाता। लेकिन यह मान्यता शुद्ध नहीं, यद्यपि यह बात आज हममें से बहुत-से लोग मानते हैं। अगर हम यह मानते हैं कि हमें खुद मजदूरों का शोषण न करना चाहिए, तो दूसरे मुनाफा करें और हम उसमें से हिस्सा लेकर अपना काम चलायें, इसे भी कैसे मान सकते हैं? यह तो वैसा ही हुआ कि हम अपने हाथ से बछिया नहीं मारते, लेकिन उसे कसाई के हाथ बेच देते हैं।

इसका मतलब यह नहीं कि हमें सम्पत्ति-दान नहीं लेना चाहिए। उसे लेना है, इतना ही नहीं, बल्कि इस यज्ञ का जोरों से प्रसार भी होना चाहिए, क्योंकि हमारी क्रांति का यह एक मुख्य अंग है। इससे इस विचार तथा वृत्ति का उद्बोधन होता है कि जो कुछ सम्पत्ति और साधन हमारे पास है, उसे समाज को अर्पण करके ही उपभोग करना है। इसलिए सम्पत्ति-विसर्जन की अहिंसक क्रांति के लिए यह आंदोलन अत्यंत महत्त्व का है। लेकिन अगर हमें अपने काम चलाने के साधन को शोषण-मुक्ति की सिद्धि के अनुकूल रखना है,तो इस प्रकार सम्पत्ति-दान का विनियोग उन्हीं साधन-हीन मजदूरों के पुनर्वास में खर्च करना चाहिए, जिनके श्रम पर से मुनाफे के रूप में इस सम्पत्ति का निर्माण हुआ है।

श्रम-दान ही सच्चा शोषण-मुक्त साधन : अब प्रश्न उठता है कि आंदोलन का आधार क्या हो? निस्संदेह 'श्रम' ही एकमात्र शोषण-मुक्त साधन है। इसलिए हमारा आंदोलन पूर्ण रूप से श्रम-आधृत होना चाहिए। इसके लिए हमें व्यापक रूप से श्रम-दान का संगठन करना चाहिए। आखिर मनुष्य की श्रम-शक्ति भी किसी की व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं। प्रत्येक व्यक्ति की श्रम-शक्ति के निर्माण में सारे समाज का सहयोग तथा सहायता मिली है। अतएव हरएक को समाज के लिए कुछ-न-कुछ श्रम करना ही चाहिए। आपको इस विचार को फैलाना चाहिए और अपने को उसी के सहारे स्थापित करना चाहिए। इसके अनेक प्रकार भी हो सकते हैं। विनोबाजी ने सूतांजलि के रूप में एक प्रकार हमें बताया है। आप कहेंगे कि देश का हरएक आदमी सूत नहीं कातता। इसलिए हर क्षेत्र में इसका व्यापक संगठन नहीं है। यह सही है, इसका क्षेत्र मर्यादित है, फिर भी हमें उसे व्यापक बनाना है। लेकिन हिन्दुस्तान के हर देहात में कृषि का काम होता है और वहां अनाज की कटाई भी होती है। लोक-सेवक खुद श्रम-दानियों के साथ किसानों के खेतों में अनाज की कटाई करके मजदूरी कमा सकते हैं और अपने आंदोलन को उसी आधार पर चला सकते हैं। इससे न केवल साधन-प्राप्ति होगी, बल्कि यह कार्यक्रम खुद ही वर्ग-निराकरण की क्रांति के लिए एक अत्यंत प्रभावशाली प्रेरक शक्ति होगी।

श्रम-यात्रा की अनुभूत योजना : मैंने देखा है कि साल में डेढ़ महीना कटाई का काम होता है, खरीफ के लिए एक महीना और रबी के लिए पंद्रह दिन। 'श्रम-भारती' के प्रयोग के आधार पर मैं कह सकता हूं कि एक कार्यकर्ता कम-से-कम डेढ़ रुपया दैनिक की सामग्री कमा सकता है। निस्संदेह इससे उसके एक दिन का गुजारा चल सकता है। अगर उसके साथ उस क्षेत्र के सात और प्रेमी भाई श्रम-दान के लिए मिल जायं, तो आठ व्यक्ति डेढ़ महीना मजदूरी करके एक व्यक्ति के बारह महीने का गुजारा चला सकते हैं। बाकी खर्चे के लिए इससे भी अधिक श्रमदान कटाई के लिए मिल सकता है, ऐसा मेरा विश्वास है। अगर हम निष्ठापूर्वक सम्पत्ति का मूलस्रोत यानी श्रमदान का झरना खोद निकालने में लग जायं, तो हजारों की तायदाद में श्रमदानी मिलेंगे, इसमें मुझे संदेह नहीं।

इसके लिए निम्नलिखित कुछ कार्यक्रम बन सकता है। लोक-सेवक साल में साढ़े दस महीने विचार-प्रचार और संगठन का काम करें और डेढ़ महीने श्रमदान-यात्रा का आयोजन करें। कटाई एक बार में पंद्रह दिन चलती है। एक गांव में अगर तीन दिन का पड़ाव रखा जाय, तो कार्यकर्ता के क्षेत्र में एक बार में पांच पड़ाव का आयोजन करना होगा। लगभग पांच मील पर पड़ाव रखा जा सकता है। प्रारंभिक तैयारी के रूप में पड़ाव के गांव में श्रमदान-समिति का संगठन किया जाय, जो उस क्षेत्र में श्रमदान-पत्र प्राप्त करके रखे, ताकि वे समय पर लोक-सेवकों के साथ कटाई में शामिल हो सकें। इस प्रकार रबी, भदई तथा अगहनी फसल में पांच-पांच पड़ावों का आयोजन क्या बहुत कठिन है? यह आंदोलन व्यापक होने पर श्रमदान से प्राप्त साधन ग्रामोदय-समितियों का कोष बन सकता है और ग्रामोदय-समितियां ही आगे चलकर सारे आंदोलन की जिम्मेदारी ले सकती हैं। लोक-सेवक उनके मार्गप्रदर्शक मात्र रहेंगे। लोक-सेवक साल में डेढ़ महीना श्रम-यात्रा तो करेंगे ही, लेकिन बाकी साढ़े दस महीने में उन्हें प्रतिदिन तीन-चार घंटे उत्पादक श्रम करना होगा। इसके लिए वे जिस किसी गांव में टिकें, उसी गांव के किसान और मजदूरों के काम में मदद कर सकते हैं।

जब तक हमारा आंदोलन इस प्रकार सम्पूर्ण रूप से श्रम के सहारे न चलेगा, तब तक शोषण-मुक्ति के विचार के प्रति जनता की निष्ठा आकृष्ट नहीं होगी और न वास्तविक जन-शक्ति ही उद्बोधित हो सकेगी। मुझे आशा है, आप सब भाई-बहन इन बातों पर गंभीर विचार करेंगे। अगर आज हमने इस पहलू पर निष्ठापूर्वक अमल न किया, तो हमारी सिद्धि में भी संकट आ सकता है।

आचारहीन उच्चार खतरे से खाली नहीं : सन् 1921 से स्वराज-आंदोलन के आखिर तक गांधीजी ने अपने आंदोलन को चर्खे के आधार पर खड़ा करना चाहा। वे हमेशा 'चर्खे से स्वराज' की बात करते थे। 1921 में ही बेजवाड़ा के कार्यक्रम में उन्होंने पचीस लाख चर्खे चलाने का संकल्प का प्रस्ताव करवाया था। फिर कांग्रेस की सदस्यता-शुल्क चार आना के बदले दो हजार गज सूत रखवाने की कोशिश की। 1941 में नियमित रूप से चर्खा चलाने की शर्त को व्यक्तिगत सत्याग्रह की पात्रता के लिए अनिवार्य बताया। यह सब हुआ, लेकिन कांग्रेस के बड़े नेता से लेकर साधारण सिपाही तक ने निरन्तर चर्खे का उच्चारण करते हुए भी उसका अमल नहीं किया। नतीजा यह हुआ कि महान् त्याग और तपस्या की परिणति से हमें जो सिद्धि मिली, वह पूंजीवाद के गर्भ में विलीन होती जा रही है। इसी तरह आज हम सब बड़े-छोटे कार्यकर्ता निरन्तर श्रम का उच्चारण करते रहते हैं। गांव-गांव जाकर भूमिवानों से कहते हैं कि 'जितनी भूमि आप अपने हाथ से जोत सकते हैं, उतनी रखकर बाकी भूमिहीन को दे दीजिये।' लेकिन सारे उच्चारण के बावजूद हम श्रम का अमल नहीं कर रहे हैं। नतीजा यह होगा कि हमारे त्याग और तपस्या की सिद्धि भी कम्युनिज्म के पेट में चली जायेगी। व्यक्तिगत मालकियतवाद के निराकरण के साथ-साथ अगर 'श्रमवाद' के बदले में 'मैनेजरवाद' कायम रह गया— अगर 'बुद्धिजीवी' और 'श्रमजीवी' नाम से दो वर्ग रह गये—तो सम्पत्ति की व्यक्तिगत मालकियत-विसर्जन भी एक बुद्धिजीवी-वर्ग के संचालन तथा नियंत्रण में आने को बाध्य होगा। फलस्वरूप समाज में मैनेजर-वर्ग के अधिनायकत्व (Managerial Dictatorship) की स्थापना हो जायगी। ❑

(सर्वोदय सम्मेलन में कार्यकर्ताओं के बीच दिये गये भाषण का सार, झांसी, 28.4.1957)

खादी आजादी का वस्त्र है और रहेगा

❑ बाल विजय

खादी राष्ट्र की ऐतिहासिक धरोहर है। आज खादी कार्यक्रम गंभीर चुनौतियों के दौर से गुजर रहा है। या तो इससे उबरें या इसी को भेंट चढ़ें। यही समय है लोगों की परीक्षा का कि वे बहुराष्ट्रीय कंपनी के खादी ब्रांड को चुनते हैं या महात्मा गांधी की खादी को। महात्मा गांधी की खादी केवल शरीर ढँकने का साधन मात्र अथवा रोजगार देने वाला एक व्यवसायिक उत्पाद नहीं थी। इसके बहुआयामी प्रभाव थे। यह गांवों के पुनर्जीवन एवं समाज के गुणात्मक काया-परिवर्तन का काम भी करती थी। खादी सत्य एवं अहिंसा के गांधी-दर्शन को परिलक्षित करती है। जो चार—एस स्तम्भों पर—*स्वराज, स्वदेशी, स्वावलंबन एवं सत्याग्रह*—आधारित है। यह साम्राज्यवाद के विरुद्ध आजादी का प्रतीक भी थी। यही कारण था कि आजादी की लड़ाई के समय इसने आधुनिक इंटरनेट प्रौद्योगिकी में सोशल नेटवर्किंग जैसी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। इसने संपूर्ण देश में विदेशी शासन से आजादी की प्यास जगायी। इसीलिए पं. जवाहरलाल नेहरू ने खादी को *'आजादी की वर्दी'* कहा था। लोगों की भावनाओं की कद्र करते हुए महात्मा गांधी ने 1920 में पूरे देश में खादी ग्रामोद्योगी संस्थाओं को अहिंसक क्रांतिकारी शक्ति-केन्द्रों के रूप में स्थापित की। वे प्रबंधन तकनीक में माहिर थे। संस्थाओं के गठन में ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त को प्रस्थापित किया। लाभ कमाने की धारणा को बदलकर इन्हें *''ना मुनाफा ना घाटा''* के सिद्धान्त पर काम करने की संस्कृति की नींव रखी। साथ ही शुद्धता, सत्यता, पारदर्शिता और उपभोक्ता संरक्षण की दृष्टि से कॉस्ट चार्ट की पद्धति अमल में लायी।

स्वतंत्रता मिलने के बाद इन्हीं मानव-केन्द्रित के. वी. आई. संस्थाओं ने केन्द्र सरकार से हाथ मिलाकर पूरे देश के पुनर्निर्माण का काम किया। ये संस्थाएं पहले से ही समाज उत्थान के बहुआयामी काम कर रही थीं। उसी का फायदा उठाते हुए भारतीय गणतंत्र में स्थापित सरकार ने जन-भावनाओं की कद्र करते हुए इन संस्थाओं को सहयोग देने, प्रोत्साहित करने व सहायता उपलब्ध कराने के लिए संसद में कानून बनाकर खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग की स्थापना की। परंतु धीरे-धीरे आयोग का वास्तविक स्वभाव व स्वरूप बदला। वह एक नियंत्रण करने वाली नियामक संस्था के रूप में कार्य करने लगा। इसीलिए के. वी. आई. संस्थाओं की स्वायत्तता स्वतः ही खोती चली गयी। अपने उदारवादी रवैये को प्रदर्शित करने हेतु उसने हालांकि बाजार विकास सहयोग (एमडीए) प्रदान करने की घोषणा भी की। किन्तु, वास्तविक धारणा से हटकर वह कुछ अवांछनीय शर्तों के साथ। एम. डी. ए. के पीछे तर्क यह है कि समाज में खादी जैसी सामाजिक आवश्यकता में उपयोगी, प्रतिष्ठित, कल्याणकारी व सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने वाले उत्पाद को बढ़ावा देना है, जोकि किसी भी लोकप्रिय सरकार का कर्तव्य है। यह एक तथ्य है कि नौकरशाहों के हाथ में शक्ति है और वे शक्ति-केन्द्र के रूप में कार्य करते हैं। वे हर क्रांतिकारी सुधार का विरोध करते हैं जो उन्हें अथवा उनकी कार्यप्रणाली को प्रभावित करते हों।

हाल के वर्षों में खादी ग्रामोद्योग कमीशन सामाजिक सुरक्षा के ऐतिहासिक खादी कार्यक्रम को लाभ कमाने वाली कॉरपोरेट कंपनी में रूपान्तरण करने का प्रयत्न कर रहा है। यह परिवर्तन खादी रिफार्म एवं डेवलपमेंट कार्यक्रम के तहत विदेशी आर्थिक संस्थानों के सहयोग से शुरू हुआ है। निहित स्वार्थ के. वी. आई. सेक्टर की पुरानी धारणा को रूपान्तरित कर रहे हैं। वे आकर्षक कार्यक्रमों एवं स्कीमों के माध्यम से राष्ट्र धरोहर के. वी. आई. संस्थाओं को आधुनिक भूमंडलीकरण, उदारवाद व निजीकरण की चाशनी में लपेटने का प्रयास कर रहे हैं। भारत सरकार की नयी नीति अमेरिका में जन्मी आक्रामक उपभोक्तावादी संस्कृति पर आधारित है। यह संस्कृति उन देशों में पनपी व बढ़ी जिन्होंने अपनी करेंसी को अमेरिकी डालर के साथ जोड़ा एवं अमेरिकी रास्ते पर चले। *'किसी भी प्रकार से पैसा कमाओ'* इसका मूल मंत्र है। इसके साथ लालच जुड़ गया जिसने इसे और भी घिनौना बना दिया। पीछे भ्रष्टाचार भी जुड़ गया। जिसने पूरे विश्व में आर्थिक अस्थिरता ला दी, विशेषकर ग्राम प्रधान देशों जैसे भारत के लिए। इस प्रक्रिया में सामान्य व्यक्ति एवं मानव-केन्द्रित आर्थिक कार्यक्रमों की बलि चढ़ गयी।

इसीलिए दूसरों का शिकार करने वाले पूंजीवाद की समाप्ति की मांग को लेकर युवा प्रदर्शनकारी न्यूयार्क (विश्व की आर्थिक राजधानी) एवं लंदन (यूरोप की आर्थिक राजधानी) की सड़कों पर उतर आये। यह अब सिद्ध हो चुका है कि उच्च वृद्धि (ग्रोथ रेट) दर किसी राज्य की आर्थिक दशा को सुधारने का पैमाना नहीं हो सकता। क्योंकि वह वृद्धि अपने आप तलहटी के लोगों तक नहीं पहुंचती। महात्मा गांधी की इस बारे में दूर दृष्टि थी। वे ऐसे आर्थिक विकासशील तंत्र के हिमायती थे जो मानव-केन्द्रित हो, न कि केवल कुछ लोगों के लिए पैसा कमा कर देने वाला। इसी दृष्टि के चलते ह्यूमन डेवलपमेंट इंडेक्स एवं ह्यूमन हैप्पीनेस इंडेक्स को भी *विचारणीय* बनाया जाये। वही देश का वास्तविक प्रोग्रेस इंडेक्स बतायेगा। उन्होंने तब के. वी. आई. संस्थाओं का उदाहरण भी प्रस्तुत किया। किसी भी राष्ट्रीय आर्थिक तंत्र को कम-से-कम इस आधार पर तो काम करना ही होगा कि वह समाज के हर व्यक्ति स्त्री-पुरुष की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति जहां तक संभव है उनके घर के आहाते में हो सके।

मित्रो, स्वयं को या अपनी कार्य-पद्धति को अधोगामी मत बनाइये। आप भाग्यशाली हैं कि महात्मा गांधी द्वारा प्रायोजित के. वी. आई. गतिविधियां जो मानव-केन्द्रित हैं उसके आप भागीदार हैं। कोई भी परिणाम झेलने के लिए आपको तैयार रहना चाहिए। लक्ष्मण रेखा खींचना अब आवश्यक हो गया है। अब समय आ गया है, यह निर्णय करने का कि हेरिटेज (धरोहर) खादी सेक्टर आजादी के वस्त्र के रूप में जीवित रहे, या बहुराष्ट्रीय पूंजीवाद का दास बनकर। के. वी. आई. सी. संस्थाओं को, जो महात्मा गांधी द्वारा प्रतिष्ठित, वफादारी और समर्पण के सिद्धान्त पर काम करती रहीं, अब अपने आपको के. वी. आई. के प्रशासनिक नियंत्रण से और नियामक पद्धति से स्वयं को सर्वथा आजाद होने की घोषणा कर देनी चाहिए। यह वास्तविक स्वायत्तता एवं स्वतंत्रता सुरक्षित रखने हेतु जरूरी है। यह सर्वविदित सत्य है कि कुशलता की श्रेष्ठता के लिए पूर्ण स्वायत्तता जरूरी है।

संस्थाओं में समर्पित कार्यकर्ताओं की भरमार है, जो प्रबंधन का लंबा अनुभव रखते हैं, प्रौद्योगिकी से अपने को अपडेट रखते हैं और जिनमें कार्यक्षमता भी है किसी भी लक्ष्य को हासिल करने में। ये संस्थाएं उन आधुनिक एनजीओ की तरह नहीं हैं जो कॉरपोरेट-पद्धति की सामाजिक गतिविधियां संचालित करती हैं एवं लाभ कमाती हैं। खादी संस्थाएं सर्वजन हिताय के सिद्धान्त पर काम करने वाली संस्थाएं हैं जो समाज के उत्थान के साथ-साथ आध्यात्मिक जागृति भी लाती हैं। इसीलिए वे जिम्मेदारी, निष्ठा, समग्रता व मिशनरी उत्साह के साथ गांव के विकास हेतु समर्पित भाव से काम कर सकती हैं, जिसका सपना महात्मा गांधी ने देखा था। परन्तु इसके लिए उन्हें अपनी मानसिकता व वर्तमान में प्रचलित कार्यप्रणाली बदलनी होगी।

आज भी लोगों में के. वी. आई. संस्थाओं और उनके कार्यों के प्रति विश्वास एवं सहानुभूति है। संस्थाओं में क्षमता है कि ऋण की वर्तमान स्थिति हेतु वे अप्रयुक्त एवं अतिरिक्त सम्पत्ति का निस्तारण कर सकें। अपना आत्म सम्मान व आधारभूत सिद्धान्तों का सौदा किये बिना वे केन्द्र व प्रदेश सरकार की अनेकों स्कीमों का तथा सामाजिक संस्थाएं, ट्रस्टों और जो भी संगठन महात्मा गांधी के सपने को साकार करने में मदद करे उनकी सहायता लेने में संस्थाएं स्वतंत्र रहेंगी। यदि भारत सरकार ऐतिहासिक धरोहर खादी सेक्टर का संपूर्ण ऋण समाप्त करने को तैयार नहीं है, जैसा कि उसने उत्तर प्रदेश हैण्डलूम बुनकरों के लिए किया था, तो मेरा विश्वास है कि के. वी. आई. संस्थाओं को अपनी अप्रयुक्त व अलाभकारी सम्पत्ति को बेचकर वह ऋण चुकाने से गुरेज नहीं होगी, जिसे संस्थाओं ने स्वयं के संसाधनों से खरीदी है अथवा जनता ने दान में दिया है। के.वी.आई. संस्थाओं को राष्ट्रपिता को सम्मान देने हेतु ऐतिहासिक धरोहर खादी को किसी भी कीमत पर सुरक्षित और संरक्षित रखना चाहिए। गांधीजी ने अपने जीवन से यह संदेश दिया है जिसमें आप विश्वास करते हैं, उसके लिए आप संकल्पबद्ध होकर समर्पित हैं तो आप दुनिया बदल सकते हैं।

मित्रो, खालिस निर्भरता या पराधीनता घातक है। इसीलिए ऐतिहासिक धरोहर खादी संस्थाओं के लिए पूर्ण आजादी व स्वायत्तता अनिवार्य है। खादी सभा जो कि 16 व 17 मार्च, 2013 को सेवाग्राम में हुई थी, ने एक कमिटी गठित की जो रूपान्तरण की प्रक्रिया, नियंत्रण का स्वरूप, नियम व शर्तें, आचार संहिता, प्रमाण-पत्र की प्रक्रिया व दूसरे मसलों पर अपने सुझाव देगी। उम्मीद है कि यह कमिटी जल्द-से-जल्द अपनी रिपोर्ट देगी जिन्हें खादी मिशन की अगली बैठक में अंतिम रूप दिया जायेगा।

चुनौतियों का सामना करने के लिए साहसी बनिए। नीति,आदर्श व आध्यात्मिक मूल्यों के प्रति जागरूक रहते हुए मजबूत बनिए। के.वी.आई.सी. की मौजूदा दमघोंटू व्यवस्था से बाहर निकलने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ होना होगा। जनजागरण द्वारा पूरे देश में लहर बनायें ताकि हमेशा के लिए नदी की धारा बदली जा सके। ईश्वर की कृपा से एक बार फिर अहिंसा के अस्त्र का इस्तेमाल करके निःशब्द क्रांति को गतिशील बनाने का अवसर आपको प्राप्त हुआ है। यह आज की आवश्यकता है। महात्मा गांधी का आशीर्वाद सदा आपके साथ होगा। ❑

45वां सर्वोदय समाज सम्मेलन

सर्वोदय समाज का 45वां सम्मेलन 23-24-25 अक्टूबर, 2013 को आगरा में होने जा रहा है।

सम्मेलन में भाग लेने वालों के लिए रेलवे की तरफ से किराये में 50% छूट की व्यवस्था है। कन्शेसन फार्म 10/- प्रति फार्म के हिसाब से सर्वोदय समाज, महादेव भाई भवन, सेवाग्राम-442102, जिला-वर्धा (महाराष्ट्र) फोन नं. : 07152-284061, ई-मेल : sarvasevasangha@hotmail.com से मंगाये जा सकते हैं।

सम्मेलन में प्रतिनिधियों के लिए निवास की व्यवस्था 22 अक्टूबर की शाम से 25 अक्टूबर की शाम तक रहेगी। सभी प्रतिनिधियों से निवेदन है कि वे अपना कार्यक्रम इसी अनुसार बनायें। –महादेव विद्रोही

आग लगने पर कुआँ खोदना

❑ अनुपम मिश्र

अकाल की पदचाप साफ सुनाई दे रही है। सारा देश चिंतित है। यह सच है कि अकाल कोई पहली बार नहीं आ रहा है, लेकिन इस अकाल में ऐसा कुछ होने वाला है, जो पहले कभी नहीं हुआ। देश में सबसे सस्ती कारों का वादा पूरा किया जा चुका है।कार के साथ ऐसे अन्य यंत्र उपकरणों के दाम भी घटे हैं जो 10 साल पहले बहुत सारे लोगों की पहुंच से दूर होते थे। इस दौर में सबसे सस्ती कारों के साथ सबसे महंगी दाल भी मिलने वाली है—यही इस अकाल की सबसे भयावह तस्वीर होगी। यह बात औद्योगिक विकास के विरुद्ध नहीं कही जा रही है। लेकिन इस महादेश के बारे में जो लोग सोच रहे हैं, उन्हें इसकी खेती, इसके पानी, अकाल, बाढ़ सबके बारे में सोचना होगा।

हमारे यहां एक कहावत है, 'आग लगने पर कुआं खोदना'। कई बार आग लगी होगी और कई बार कुएं खोदे गए होंगे, तब अनुभवों की मथानी से मथ कर ही ऐसी कहावतें मक्खन की तरह ऊपर आई होंगी। लेकिन कहावतों को लोग या नेतृत्व जल्दी भूल जाते हैं। अकाल की आग लग चुकी है और अब और कुआं खोदने की तैयारी चल रही है। लेकिन देश के नेतृत्व का—सत्तारूढ़ और विपक्ष का भी—पूरा ध्यान लगता नहीं कि कुआं खोदने की तरफ है।

कई बातें बार-बार कहनी पड़ती हैं। इन्हीं में एक बात यह भी है कि अकाल कभी अकेले नहीं आता। उससे बहुत पहले अच्छे विचारों का अकाल पड़ने लगता है। अच्छे विचार का अर्थ है, अच्छी योजनाएं, अच्छे काम। अच्छी योजनाओं का अकाल और बुरी योजनाओं की बाढ़। पिछले दौर में ऐसा ही कुछ हुआ है। देश को स्वर्ग बना देने की तमन्ना में तमाम नेताओं ने स्पेशल इकोनॉमिक जोन, सिंगूर, नंदीग्राम और ऐसी ही न जाने कितनी बड़ी-बड़ी योजनाओं पर पूरा ध्यान दिया। इस बीच यह भी सुना गया कि इतने सारे लोगों का खेती करना जरूरी नहीं है। एक जिम्मेदार नेता की तरफ से यह भी बयान आया कि भारत को गांवों का देश कहना जरूरी नहीं है। गांवों में रहने वाले शहरों में आकर रहने लगेंगे, तो हम उन्हें बेहतर चिकित्सा, बेहतर शिक्षा और बेहतर जीवन के लिए सभी सुविधाएं आसानी से दे सकेंगे। इन्हें लगता होगा कि शहरों में रहने वाले सभी लोगों को ये सभी सुविधाएं मिल ही चुकी हैं। इसका उत्तर तो शहर वाले ही देंगे।

लेकिन इस बात को यहीं छोड़ दीजिए। हमारे सामने मुख्य चुनौती है खरीफ की फसल को बचाना और आने वाले रबी की फसल की ठीक-ठीक तैयारी। दुर्भाग्य से इसका कोई बना बनाया ढांचा सरकार के हाथ फिलहाल नहीं दिखता। देश के बहुत बड़े हिस्से में कुछ साल पहले तक किसानों को इस बात की खूब समझ थी कि मानसून के आसार अच्छे न दिखें तो पानी की कम मांग करने वाली फसलें बो ली जाएं। इस तरह के बीज पीढ़ियों से सुरक्षित रखे गए थे। कम प्यास वाली फसलें अकाल का दौर पार कर जाती थीं। लेकिन आधुनिक विकास के दौर ने, नई नीतियों ने किसान के इस स्वावलंबन को अनजाने में ही सही, पर तोड़ा जरूर है। लगभग हर क्षेत्र में धान, गेहूं, ज्वार, बाजरा के हर खेत में पानी को देखकर बीज बोने की पूरी तैयारी रहती थी। पर 30-40 साल के आधुनिक कृषि विकास ने इस बारीक समझ को आम तौर पर तोड़ डाला है। पीढ़ियों से एक जगह रहकर वहां की मिट्टी, पानी, बीज, खाद—सब कुछ जानने वाला किसान अब उस कृषि अधिकारी की सलाह पर निर्भर हो गया है जिसके छह आठ महीनों में ट्रांसफर हो जाता है।

किसानों के सामने एक दूसरी मजबूरी उन्हें सिंचाई के अपने साधनों से काट देने की भी है। पहले जितना पानी मुहैया होता था, उसके अनुकूल फसल ली जाती थी। अब नई योजनाओं का आग्रह रहता है कि राजस्थान में भी गेहूं, धान, गन्ना, मूंगफली जैसी फसलें पैदा होनी चाहिए। कम पानी के इलाके में ज्यादा पानी मांगने वाली फसलों को बोने का रिवाज बढ़ता ही जा रहा है। इनमें बहुत पानी लगता है। सरकार को लगता है कि बहुत पानी देने को ही तो हम बैठे हैं। ऐसे इलाके में अरबों रुपयों की लागत से इंदिरा नहर, नर्मदा नहर जैसी योजनाओं के जरिए सैकड़ों किलोमीटर दूर का पानी सूखे बताए गए इलाकों में पटक दिया गया है। लेकिन यह आपूर्ति लंबे समय तक के लिए निर्बाध नहीं चल पाएगी।

इस समय सरकारों को अपने-अपने क्षेत्रों में ऐसे इलाके खोजने चाहिए, जहां कम पानी गिरने के बाद भी अकाल की उतनी काली छाया नहीं दिखती, बाकी क्षेत्रों में जैसा अंदेशा है। पूरे देश के बारे में बताना तो कठिन है पर राजस्थान का अलवर ऐसा इलाका है, जहां साल में 25-26 इंच पानी गिरता है।

जयपुर और नागौर में भी ऐसी मिसालें हैं। जयपुर के ग्रामीण इलाके में भी बड़ी आसानी से ऐसे गांव मिल जाएंगे, जहां कहा जा सकता है अकाल की परिस्थिति के बावजूद फसल और पीने के लिए पानी सुरक्षित रखा गया है। जैसलमेर और रामगढ़ जैसे और भी सूखे इलाकों की ओर चलें, जहां चार इंच से भी कम पानी गिरता है। लेकिन वहां भी कुछ गांव लोगों की 10-20 साल की तपस्या के बूते पर आज इतना कह सकते हैं कि हमारे यहां पीने के पानी की कमी नहीं है। उधर महाराष्ट्र के भंडारा में तो उत्तराखंड के पौड़ी जिले में भी कुछ हिस्से ऐसे मिल जाएंगे। हरेक राज्य में ऐसी मिसालें खोजनी चाहिए और उनसे अकाल के लिए सबक लेने चाहिए। सरकारों के पास बुरे कामों को खोजने का एक खुफिया विभाग है ही। नेतृत्व को अकाल के बीच भी इन अच्छे कामों की सुगंध न आए तो वे इनकी खोज में खुफिया विभागों को भी लगा ही सकते हैं।

पिछले दिनों कृषि वैज्ञानिकों और मंत्रालय से जुड़े अधिकारियों व नेताओं ने इस बात पर जोर दिया है कि कृषि अनुसंधान संस्थाओं में, कृषि विश्वविद्यालयों में अब कम पानी की मांग करने वाली फसलों पर शोध होना चाहिए। उन्हें इतनी जानकारी तो होनी चाहिए थी कि ऐसे बीज समाज के पास बराबर रहे हैं। समाज ने इन फसलों पर, बीजों पर बहुत पहले से काम किया था। उनके लिए आधुनिक सिंचाई की जरूरत ही नहीं है। इन्हें बारानी खेती के इलाके कहा जाता है। 20-30 सालों में बारानी खेती के इलाकों को आधुनिक कृषि की दासी बनाने की कोशिशें हुई हैं। ऐसे क्षेत्रों को पिछड़ा बताया गया, ऐसे बीजों को और उन्हें बोने वालों को पिछड़ा बताया गया। उन्हें पंजाब-हरियाणा जैसी आधुनिक खेती करके दिखाने के लिए कहा जाता रहा है। आज हम बहुत दुख के साथ देख रहे हैं कि अकाल का संकट पंजाब-हरियाणा पर भी छा रहा है। एक समय था जब बारानी इलाके देश का सबसे स्वादिष्ट अन्न पैदा करते थे। दिल्ली-मुंबई के बाजारों में आज भी सबसे महंगा गेहूं मध्यप्रदेश के बारानी खेती वाले इलाकों से आता है। अब तो चेतें। बारानी की इज्जत बढ़ाएं।

इसलिए, जब अकाल आये तो हम सब मिलकर सीखें कि अकाल अकेले नहीं आता है। अगली बार जब अकाल पड़े तो उससे पहले अच्छी योजनाओं का अकाल न आने दें। उन इलाकों, लोगों और परंपराओं से कुछ सीखें जो इस अकाल के बीच में भी सुजलाम्, सुफलाम्, बने हुए थे। ❑

अलविदा सच्चिदा बाबू

निष्ठावान एवं समर्पित सर्वोदय तथा खादी कार्यकर्ता श्री सच्चिदानंद सिंह का 19 जुलाई, 2013 को सरडीहा, जिला-सहरसा (बिहार) में निधन हो गया। वे 82 वर्ष के थे।

आपात्काल की घोषणा होने पर उन्हें भारत रक्षा अधिनियम के अंतर्गत गिरफ्तार कर लिया गया। हम दोनों लंबे समय तक जिला जेल, सहरसा में बंद थे। हमलोगों ने यह मान लिया था कि श्रीमती इंदिरा गांधी 10 वर्ष से पहले आपात्काल खतम नहीं करेंगी, अतः तब तक अपना मुकाम जेल में ही रहेगा। हम छूटने का सपना तक नहीं देखते थे।

महीनों बीत जाने के बाद पुराने कपड़े फटने लगे तो श्री सच्चिदा बाबू को जेल में बने कपड़े दिये गये जो मिल के धागे से बने थे। मैनेजर साहब ने विनम्रतापूर्वक इसे पहनने से इनकार कर दिया। एक सर्वोदय एवं खादी का कार्यकर्ता मिल के धागे से बने कपड़े कैसे पहन सकता है! मुझे याद है कि कपड़े फट जाने के कारण वे महीनों तक सिर्फ धोती ही पहनते रहे। उनकी इस निष्ठा से जेल प्रशासन झुका एवं अंततः उनके लिए खादी के कपड़े मंगवाये गये।

जब श्री सच्चिदा बाबू को गिरफ्तार किया गया उस समय वे सिंहेश्वर स्थित खादी भंडार के मैनेजर थे। अतः हम सभी आंदोलनकारी उन्हें 'मैनेजर साहब' के नाम से संबोधित करते थे। मैनेजर साहब कहते थे, सामाजिक कार्यकर्ता का जीवन सफेद चादर की तरह होता है, उस पर पड़ा एक छोटा धब्बा भी दूर से दिखायी देता है। अतः कार्यकर्ताओं को अपनी चादर में कभी दाग नहीं लगने देना चाहिए।

बिहार सरकार ने आपात्काल में डी.आई.आर. एवं मीसा में बंद आंदोलनकारियों को पेंशन देने का फैसला किया पर श्री सच्चिदाबाबू को कभी पेंशन नहीं मिला। वे अंतिम दिनों में अस्वस्थ थे एवं आर्थिक परेशानियों से गुजर रहे थे। मैंने उनकी इस स्थिति की जानकारी बिहार सरकार को 'जेपी सेनानी समिति' के एक सदस्य से किया लेकिन उनपर इसका कोई असर नहीं हुआ क्योंकि सत्ता का चरित्र कुछ अलग ही होता है।

मैनेजर साहब का पूरा जीवन मेरे लिए हमेशा प्रेरणादायी रहा। उनकी याद मेरे स्मृति-पटल पर अमिट रहेगी।

मैनेजर साहब को मेरा शत-शत नमन तथा शोकाकुल परिवार के प्रति हार्दिक संवेदनाएं। **–महादेव विद्रोही**

जैविक खेती एक जीवन मूल्य

❑ घनश्याम

आज पूरी दुनिया भयंकर खाद्य और जलवायु संकट के दौर से गुजर रही है। एक तरफ देश चिन्तित है तो दूसरी तरफ समाज नवनिर्माण की प्रक्रिया में लगे सक्रियकर्मी न सिर्फ चिन्तन कर रहे हैं, बल्कि जमीनी प्रयोग करने की दिशा में सक्रिय हैं। इसके लिए यह जरूरी है कि उक्त दोनों संकट की गंभीरता और उससे उबरने के उपाय पर मौलिक चिंतन किए जाएं। इसके लिए परंपरा की जड़ की तलाश करनी होगी तथा परंपरा का परिष्कार करते हुए आगे बढ़ना होगा। साथ ही चकाचौंध वाली आधुनिकता और कथित विकास के मकड़जाल से निकलना होगा। देशज खेती से संबंधित चिंतन के कुछ सांस्कृतिक पहलू पर ध्यान खींचने की कोशिश यहां की जा रही है।

भयंकर खाद्य संकट के इस दौर में आज हर जगह देशज खेती पर बड़े जोरों से चर्चा हो रही है। इसे जैविक खेती या सजीव खेती के नाम से भी पुकारा जाता है। भूमंडलीकरण के आज के दौर में देशज खेती की उपयोगिता पर बहस इस बात का संकेत है कि दुनिया पुनर्चिन्तन के दौर से गुजर रही है। इस पुनर्चिन्तन को गंभीरता से समझने की जरूरत है।

पुनर्चिन्तन में शामिल लोग तीन खेमों में विभाजित हैं। पहला खेमा मानता है कि विकास का जो सिलसिला चल पड़ा है, उसमें प्रकृति को विनष्ट कर इनसान अपनी जरूरत की तमाम चीजें पा सकता है। प्रकृति का यह विनाश उसे भौतिक विकास की ओर ले जाएगा। यह चिंतन मानता है कि जीने की आवश्यक सामग्री अगर धरती पर सम्भव न हो तो अन्य ग्रहों और उपग्रहों पर जुटाई जा सकती है। इस सामग्री में जीविका की सामग्री भी निहित है।

दूसरा खेमा मानता है कि पृथ्वी पर जितने प्रकार के जीव हैं, उनमें मनुष्य सर्वश्रेष्ठ है। इसलिए मनुष्य को जिंदा रखने के लिए अन्य प्राणियों को शिकार बनाया जा सकता है। यह उसका अधिकार है। यह खेमा मनुष्य को जिंदा रखने के लिए,उसे कथित विकास की ओर ले जाने के लिए कई प्रयोग कर रहा है। उन प्रयोगों के लिए वह अन्य प्राणियों को माध्यम बना रहा है। मनुष्य 'अमर' कैसे हो, यह भी 'प्रयोग' का विषय है। इसके लिए अन्य प्राणियों को मौत के मुंह में धकेलकर उन्हें जिंदा रखने की जद्दोजहद करना प्रयोग का हिस्सा है।

तीसरा खेमा इस चिन्तन की ओर पूरी दुनिया का ध्यान आकृष्ट कर रहा है कि सृष्टि का निर्माण जीवों के परस्परावलंबन और उनके संपोषण से हुआ है। सृष्टि का निर्माण और विकास की यह प्रक्रिया करोड़ों वर्षों के नैसर्गिक संतुलन और संपोषण की बुनियाद पर टिकी है। मनुष्य उन प्राणियों में से एक है जो अपेक्षाकृत विकसित और परिष्कृत है। इस अर्थ में मनुष्य के ऊपर अपने कर्तव्य का दोहरा दायित्व आ पड़ा है। पहला, परस्परावलंबन की प्रक्रिया अबाध गति से चलती रहे। दूसरा, यह कि दूसरे प्राणियों को क्षति पहुंचाने वाली प्रक्रिया के खिलाफ वह अपना संघर्ष जारी रखे। यानी संघर्ष और निर्माण की दोहरी प्रक्रिया का दायित्व इनसान को उठाना है। सजीव खेती इसी प्रक्रिया की एक कड़ी है।

खेती जिसे अंग्रेजी में 'एग्री-कल्चर' कहते हैं, का सीधा संबंध संस्कृति से है और संस्कृति का संबंध मूल्य से। इस अर्थ में सजीव खेती मूल्य आधारित संस्कृति को पल्लवित और पुष्पित करने की कला है। सिर्फ कला नहीं, विज्ञान भी। कुल मिलाकर एक जीवन-दर्शन।

औद्योगिक सभ्यता में जिसे औद्योगिक मूल्य ने 'एग्रीकल्चर' को 'एग्रो-इंडस्ट्री' में बदलने की कोशिश की है,वह मनुष्य को संस्कृतिविहीन और मूल्यविहीन बनाने की सायास पहल साबित हो रही है। आज टकराहट इन्हीं के बीच है—मूल्य आधारित प्रक्रिया और मूल्यविहीन पहल के बीच! कथित औद्योगिक सभ्यता तकनीक को आधार बनाकर अपना लक्ष्य पाना चाहती है। इसका लक्ष्य है अधिक से अधिक पूंजी का निर्माण। और, यह पूंजी व्यक्ति केन्द्रित होती चली जाती है। पूंजी एक ऐसा उपादान है जिसका उपयोग बहुआयामी हित में हो सकता है। लेकिन यह तभी संभव है जब पूंजी समुदाय की थाती बने न कि व्यक्ति की संपत्ति। पूंजी प्राकृतिक धरोहर और श्रम के समायोजन से पैदा होती है। इसलिए पूंजी पर समाज,मानव (समुदाय) सहित मानवेत्तर प्राणियों का भी अधिकार है। लेकिन आज इस पूंजी का मुट्ठी भर लोगों की सुख-सुविधा और भोग-विलास में उपयोग किया जाता है। आधुनिक खेती इसकी देन है, जिसमें मुनाफा निहित है लेकिन मनुष्यता गायब। जहां भावप्रवणता इनसान की गरिमा को समृद्ध करती है और उसे संस्कृति की ओर ले जाती है, जहां से परस्परावलंबन और संपोषण की पद्धति समवेत होती चली जाती है। इस अर्थ में सजीव खेती संपोषण और परस्परावलंबन

की प्रक्रिया को और प्रांजल (सरल और स्पष्ट) बनाती है।

सजीव खेती महज परम्परा का परिष्कार नहीं है। यह प्रकृति और संस्कृति के संपोषण का दूसरा नाम है। इनसान के श्रम, पशु की ऊर्जा और अन्य प्राणियों के स्वेदन से गुम्फित यह लोकविद्या नए जीवन का निर्माण करती है।

जैविक खेती का सीधा रिश्ता प्रकृति के अन्य उपादानों से जुड़ा है। जंगल,जल और जानवर सजीव खेती को आगे बढ़ाने के महत्त्वपूर्ण साधन हैं। मिट्टी जितनी सजीव होगी, पानी जितना सजीव होगा तथा जंगल जितना वैविध्यपूर्ण होगा, सजीव खेती उतनी ही समृद्ध होगी। भू-आकृति और भू-भाग को ध्यान में रखकर हमारे पूर्वजों ने खेती के जिस शास्त्र का निर्माण किया, वह न सिर्फ विकसित था बल्कि परस्पर पूरक भी था। इस खेती में हमेशा इस बात का ध्यान रखा जाता है कि मानव और मानवेत्तर प्राणी का रिश्ता जितना सघन होगा, खेती उतनी ही समृद्ध और जीवनदायिनी होगी। रस-सुगंध से सुविकसित खेती इनसान के जीवन को भी सरस, मधुर और सुसंस्कृत बनाती है। जीवन गतिमान हो उठता है और मानवता गरिमापूर्ण। ऐसी स्थिति में इनसान अपनी परिधि से बाहर निकलकर समष्टि की असीम परिधि से अपना रिश्ता जोड़ता है और अपने को मुकम्मल इनसान बनाने की चेष्टा करता है। मुक्कमल इनसान का मतलब मूल्यों को जीने वाला इनसान। इस अर्थ में सजीव खेती महज एक तकनीक नहीं बल्कि जीवन मूल्य है। जब हम सजीव खेती को इस दृष्टि से देखेंगे और जीयेंगे तभी हम आज की बाजारू खेती और मूल्यविहीन भूमंडलीकरण का मुकाबला कर सकेंगे। जलवायु और खाद्य संकट से उबर सकेंगे। ❑

कट्टरतावाद और स्त्री समाज

❑ जागृति राही

कट्टरतावाद एक पुरानी बीमारी है जो आज-कल नये सिरे से राजनीतिक आंदोलन के रूप में सक्रिय हो गयी है। यह धर्म को सत्ता-प्राप्ति का औजार बना कर इस्तेमाल करती है। कट्टरतावाद ज्यादातर तानाशाही और आतंक के जरिये फलता-फूलता है। आज के समय में दुनिया के हर हिस्से में हर धर्म के अंदर ऐसी ताकतें संगठित और सक्रिय तथा काफी हद तक सफल भी हैं। ये कट्टरपंथी ताकतें औरतों की भूमिका केवल समाज के परम्परागत रूढ़िवादी न बदलने वाले मूल्यों को चलाते रहने में मानते हैं इसलिए वे औरत के दिल, दिमाग और शरीर पर अपना कब्जा बनाये रखना चाहते हैं। ऐसे लोगों द्वारा जो औरतें प्रगतिशील सोच की होती हैं, परम्परागत सोच के रहन-सहन का विरोध करती हैं, उन पर हमले होते हैं। उन्हें परिवार, समाज से बाहर कर दिया जाता है या फिर मार डाला जाता है। इसीलिए कामकाजी औरतें उन्हें पसंद नहीं आतीं। ये कट्टरपंथी औरतों के घूमने-फिरने-बोलने, मिलने, पढ़ने-लिखने, काम करने यहां तक कि कपड़े पहनने, मोबाईल रखने के फैसले खुद करते हैं और उन्हें औरतों पर लाद देते हैं। ब्रिटेन हो या भारत अफगानिस्तान हो या पाकिस्तान हर जगह कट्टरपन का नुकसान सबसे ज्यादा औरतों को ही उठाना पड़ता है। दुनिया में कट्टरपन के खिलाफ छोटे-छोटे गुटों में या अकेले ही संघर्ष करने वाली औरतों की भी कमी नहीं है। कहने को तो हम धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक देश में रहते हैं लेकिन हमारा समाज अभी भी सामंती है। हमारे देश में भी तमाम बुद्धिजीवी, पत्रकार, कलाकार, शिक्षक, स्वयंसेवी संगठन कट्टरपन के खिलाफ अपनी आवाज उठाते हैं लेकिन बड़ी दुखद बात यह है कि अभी देश की कुछ पोलिटिकल पार्टियों की सोच बेहद दकियानूसी है। हमारे यहां औरतों की दशा इसीलिए आजादी के 66 वर्ष बाद भी अच्छी नहीं है। वह हर तरह से दबायी तो जाती रही ही है अब उन पर हमले और तेज होते जा रहे हैं। कट्टरपन ज्यादातर धार्मिकता की आड़ में फैलाया जाता है और महिलाएं ज्यादातर बेहद धार्मिक होती हैं या कहें बनायी जाती हैं। महिलाएं आज पुरुषों की तरह अलग-अलग भूमिकाएं अदा कर रही हैं, तमाम पदों पर निर्णय ले रही हैं, दूसरी तरफ वही कट्टरतावादियों के दो तरीकों से आसान टारगेट भी बन रही हैं। पहला, यह क्लेम करना डेन्जरस है कि महिलाएं प्रकृति से ही कोमल, शांतिप्रिय और प्रगतिवादी होती हैं। क्योंकि महिला हो या पुरुष दोनों ही सांस्कृतिक और सामाजिक परिवेश से गढ़े जाते हैं। इसीलिए मैं इस विचार से शुरू करना चाहती हूं कि महिलाएं कट्टरता की मुखर आलोचक ही नहीं वे सक्रिय सदस्य और समर्थक भी हैं कट्टरतावादी आंदोलनों में। दूसरी तरफ यह तब है जबकि महिलाएं ही सबसे Innocent Victim भी होती हैं ऐसे हमलों की। पितृसत्तात्मक सोच और ढांचा नियंत्रण के जरिये ही अपने आपको बनाये रखता है। महिलाओं की आजादी और उनके अधिकारों के रास्ते में यह ढांचा पूरी तरह से महिलाओं के एक बड़े वर्ग के मन-मस्तिष्क पर अपना नियंत्रण करके उन्हें ही इस्तेमाल करता है औरतों के खिलाफ। ज्यादातर कट्टरवादियों द्वारा औरतों पर लगायी जाने वाली रोक-टोक को वे औरतों के जरिये घरों

के अंदर परिवारों में लागू करवाते हैं। यही सबसे बड़ी बाधा है महिलाओं की आजादी और अधिकारों की लड़ाई में। जब तक हम संगठित और एक नहीं हैं वैचारिक मानसिक स्तर पर भी हालांकि हर वर्ग की महिलाओं के साथ शोषण होता है फिर भी हम शिक्षा, धर्म, जाति, वर्ग, पहचान के स्तरों पर बंटे हुए हैं और हमारी लड़ाइयां भी।

कारण—दुनिया के स्तर पर समाजवादी, कम्यूनिस्ट विचारधारा पर आधारित शासन व्यवस्थाओं के धराशायी होने और दुनिया भर में पूंजीवाद, बाजारवाद के बढ़ने के साथ-साथ ही यूरोप से लेकर अफगानिस्तान और यहां भारत में भी धार्मिक कट्टरता में इजाफा हुआ है। बल्कि यूं कहें कि वामपंथी सोच से लड़ने के लिए धार्मिक उन्माद के जरिये कट्टरता को बढ़ावा दिया गया। और महिलाओं पर ही सबसे पहले नियंत्रण किया जाने लगा। दूसरी तरफ से धर्मनिरपेक्ष कहे जाने वाले राज्यों में भी वास्तविक लोकतंत्र लागू नहीं हुआ, वहां भी पितृसत्तात्मक समाज ने औरतों पर कब्जा बनाए रखा। औरतों के हक और बराबरी की मांग को लेकर एक मजबूत आंदोलन के अभाव में ज्यादातर औरतें यहां भी लोकतांत्रिक प्रगतिवादी सोच की जगह उसी पितृसत्ता को भोगने के लिए मजबूर हो रही हैं जिसका नतीजा है कि आज भी हमारे देश में आधी आबादी की दशा समाज के सबसे कमजोर वर्ग के रूप में है। हमारे पास संसद और विधानसभाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण की मांग को लेकर दबाव बनाने की ताकत अब तक पैदा नहीं हो सकी। जबकि पंचायतों में लाखों की संख्या में औरतें पोलिटिकल सिस्टम का, प्रशासन का हिस्सा बन रही हैं। आज भी शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, सुरक्षा जैसी मूलभूत जरूरतों के लिए औरतें मोहताज हैं। हालांकि हमारे देश में औरतों के हक में तमाम कानून बन गये और बनते जा रहे हैं लेकिन उनके लागू करने की व्यवस्थाएं, ढांचे और इरादों में कमी की वजह से निष्प्रभावी हैं। इसीलिए आज भी हिंसा और शोषण की शिकार औरतों को न्याय की उम्मीद न के बराबर है।

जहां तक कट्टरता की भूमिका का सवाल है, औरतों के पिछड़ेपन में तो वह एक निर्णायक भूमिका निभाती हैं। किसी भी तरह की कट्टरता नियंत्रण और हिंसा के माध्यम से ही समाज में फैलाई जाती है। कई बार इसे धर्म और संस्कृति की दशा या पहचान के नाम पर न्यायोचित ठहराया जाता है। औरतों की सहनशीलता भी इसके लिए बहुत हद तक जिम्मेदार है। हमें हर तरह का शोषण, अन्याय चुपचाप सहने और परिवार, समाज के लिए त्याग करने की पट्टी बचपन से पढ़ाई जाती है। नतीजा होता है कि औरतों के रूप में कहीं गुलामों की फौज, कहीं वोट बैंक, कहीं औरतों के हकों के खिलाफ इस्तेमाल होने वाली फौज का निर्माण हमारे ही स्त्री-समाज में हो गया है।

हम क्यों नहीं अपनी बेटियों को लड़ना सिखाते? हम क्यों नहीं अपनी बेटियों की आजादी के लिए लड़ते? हम उन्हें दहेज क्यों देते हैं? क्यों उन्हें सिर झुकाकर चलने वाली अच्छी औरत बनाते हैं? क्यों हम उन्हें बचपन से भूखे पेट रहकर पति की उम्र के लिए दुआ मांगने की सीख देते हैं? क्यों नहीं बताते कि उनके श्रम का भी परिवार की कमाई में उतना ही योगदान है जितना उनके बाप या भाई का। उन्हें क्यों नहीं सम्पत्ति में बराबर का हिस्सा देते। हम केवल तीन बातें कर सकें तो दुनिया बदल जाये—बेटियों को अच्छी शिक्षा दें, उन्हें सम्पत्ति में हिस्सा दें और उनके जीवन के फैसले करने का हक उन्हें दें। अगर ये तीन हक हम अपनी बेटियों को देने लगें तो समाज बदल जायेगा। औरतें ही समाज को बदलेंगी। भविष्य उनका है, आगे आने वाली दुनिया उनकी है। यह सपना देखने वालों की भी यही उम्मीद थी कि आगे आने वाली पीढ़ी महिलाओं को साथ लेकर चलेगी। महिलाओं को परिवर्तन और शांति के सिपाहियों की तरह संगठित होने का समय आ चुका है। हमने अगर यह नहीं किया तो कट्टरपन के हिमायती, हमें कहीं नुमाइश की चीज बनाकर बाजार में बेचेंगे, कहीं काले लबादे में ढंककर गुलामी की तस्वीर बना देंगे, कहीं हमारी बच्चियों को जन्म नहीं लेने देंगे और कहीं उन्हें बलात्कार की शिकार बनाकर उनकी हिम्मत तोड़ेंगे। अपने ऊपर हो रहे इन हमलों को पहचानिए और हर तरह की कट्टरता के खिलाफ हर घर में एक जंग छेड़िए। आजादी की जंग, क्योंकि वह दुनिया की बेहतरी के लिए जरूरी है। इनसानियत के लिए जरूरी है। और तो और इससे बड़ा युग धर्म भी कुछ नहीं है। ❑

'सर्वोदय जगत'
के सभी सुहृद पाठकों, ग्राहकों, लेखकों व शुभ-चिन्तकों से अनुरोध है कि अपने समसामयिक महत्त्वपूर्ण
आलेख
व क्षेत्रीय कार्यक्रमों की
रपट
पत्रिका के लिए जरूर भेजें। आपके सहयोग की सादर अपेक्षा है। –सं.

सत्याग्रह ने रोकी जल विद्युत परियोजना

❑ हिमला बहन

उत्तराखंड नदी बचाओ अभियान की टीम ने उत्तराखंड राज्य के भिलंगना ब्लॉक में बालगंगा की सहायक धर्मगंगा नदी के सिरहाने पर प्रस्तावित झाला-कोटी जल विद्युत परियोजना (12 मे. वा.) से प्रभावित होने वाले गांव अगुण्डा, कोटी, तितरूणा, थाती, रगस्या का भ्रमण किया है। इन गांवों में हुई बैठकों के आधार पर परियोजना का निर्माण करने आयी कंपनी के प्रति जन-जन में आक्रोश व्याप्त है। उन्होंने अब तक परियोजना प्रबंधकों को प्रस्तावित निर्माण स्थल तक घुसने भी नहीं दिया है। अगुण्डा की ग्राम प्रधान मीना देवी, कलम सिंह चौहान, किशन सिंह रावत, रतन सिंह चौहान आदि कई लोगों ने कहा कि ''वे अपना खून दे देंगे, परंतु वे अपने यहां से परियोजना के लिए पानी नहीं देंगे।'' वे यहां के जंगलों को भी नहीं कटने देंगे।

यहां लोगों में आक्रोश का कारण यह भी है कि पूर्व में अगुण्डा के नाम से निर्मित हुई अगुण्डा चानी जल विद्युत परियोजना (3 मे. वा. के लगभग) गांव से दूर लगभग 7 किमी. पर दाणवां-चानी में बनायी गयी है। इस परियोजना की निर्माण एजेंसी गुनसोला हाइड्रोपॉवर इंजिनियरिंग कंपनी ने लोगों को प्रारंभ में लिखित रूप से झूठे आश्वासन दिये हैं, जिसके कारण प्रभावित गांव चानी के लोग कई संकटों से घिरे हैं। यहां लोग बताते हैं कि वर्ष 2002 में उन्हें रोजगार का आश्वासन देकर एनओसी मांगी गयी थी, जो बाद में फर्जी साबित हुई है। इसको लेकर अब फिर बालगंगा घाटी में किसी भी कंपनी के साथ आगे पुनः कोई समझौता न दोहराया जाय। यह निर्णय यहां के ग्रामवासी कर चुके हैं।

अगुण्डा गांव के आगे 4 किमी. की दूरी पर झाला स्थान पर बेलक गाड भी धर्मगंगा में मिलती है। यदि प्रस्तावित परियोजना का निर्माण इस स्थान से होता है तो, सबसे पहले झाला कोटी सिंचाई नहर का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। इस नहर से सैकड़ों हेक्टेयर कृषि भूमि की सिंचाई होती है, यह भूमि यहां के लघु एवं सीमांत किसानों की है। इसके अलावा दर्जनों घराट, आधा दर्जन सिंचाई नहरों का पानी सूख जायेगा।

यद्यपि यहां पर कड़े विरोध का सामना करने वाली निर्माण कंपनी अब गांव छोड़कर वापस भी चली गयी है। इसके बावजूद भी वे झूठे एवं अस्थाई रोजगार के आश्वासनों को देने के लिए बाहर से कई प्रभावशाली लोगों का सहारा लेने का भी प्रयास करती रही है।

अगुण्डा गांव के लोगों ने स्वयं भी अपनी ऊर्जा समिति के माध्यम से एक सिंचाई नहर से छोटी पनबिजली बनायी है, इसके कारण उनके घरों में पर्याप्त रोशनी, आटा-चक्की आदि कई सुविधाएं उन्हें प्राप्त हो रही हैं। गांव वाले अपनी इस परियोजना की क्षमता दुगुना करने के लिए प्रयासरत हैं। इसी तरह पड़ोसी ग्राम सभा, कोटी में भी उरेड़ा द्वारा 200 किलोवाट की छोटी पनबिजली के पॉवर हाउस पर काम हो रहा है। लोग चाहते हैं कि इस संवेदनशील बालगंगा नदी के उद्‌गम में इसी तरह की छोटी पनबिजली बने, जिसके कारण लोगों के जीवन एवं जीविका बची रहे।

सन् 1991 के गढ़वाल भूकम्प के दौरान अगुण्डा, अदाता, अगोड़ा को भूकम्पीय केन्द्र के रूप में पहचान भी हुई थी। इस क्षेत्र में बाढ़ व भूस्खलन का जो इतिहास रहा है, उसकी संभावना इस तरह की परियोजनाओं से अधिक बढ़ सकती है।

यहां लोगों की मांग है कि निर्माण कंपनियों को जितनी तेजी से वन भूमि का हस्तांतरण आसानी से होता है, क्यों नहीं वर्षों से लंबित बूढ़ाकेदार-बेलक-भटवाड़ी मार्ग के लिए वन भूमि दी जाती है? बूढ़ाकेदार से झाला तक हल्के वाहनों के लिए मार्ग बना भी है वह दुर्घटना को न्यौता दे रहा है। इस मार्ग को दुरुस्त करने के लिए लोग मांग कर रहे हैं। यहां पर वन भूमि में लोगों के पारंपरिक हक-हकूक हैं। लोग कहते हैं कि क्यों नहीं उन्हें वनाधिकार कानून 2006 के अनुसार लौटाया जा रहा है?

परियोजना से प्रभावित होने वाले लोगों ने मंत्रियों व मुख्यमंत्री, राज्यपाल से मिलने की भी योजना बनायी है। इसी सिलसिले में एसडीएम, घनसाली से संपर्क किया गया था। वे पहले ही परियोजना को स्थगित करने संबंधी मांग पत्र सरकार को दे चुके थे। लोग कई बार धरना, प्रदर्शन करके विरोध दर्ज कर चुके हैं। यहां परियोजना का विरोध करने वाले लोग विकास विरोधी नहीं हैं, वे अगुण्डा, बूढ़ाकेदार, गेंवाली के ग्रामीणों द्वारा बनायी गयी छोटी पनबिजली का समर्थन करते हैं। ग्रामीणों की शिकायत है कि राज्य सरकार ने छोटी पनबिजली स्थानीय निकायों, पंचायतों से बनाने की कई बार घोषणा की है, जिसे धरातल पर नहीं उतारा जा रहा है। कंपनियों से सरकार अपना पल्ला नहीं छुड़वा पा रही है, जिससे पंचायती व्यवस्था के अधिकारों का हनन हो रहा है।

31 जुलाई, 2012 को टिहरी के जिलाधिकारी डॉ. रंजीत कुमार सिन्हा से भिलंगना ब्लॉक के अगुण्डा, कोटी, थाती, रगस्या, आगर गांव के ग्रामप्रधानों ने नयी टिहरी में मुलाकात की थी। साथ में क्षेत्र के जाने-माने समाजसेवी बिहारीलाल और नदी बचाओ अभियान एवं उत्तराखंड सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष सुरेश भाई की पहल से यह बैठक जिलाधिकारी के साथ इसलिए रखी गयी थी कि ग्रामीणों की परियोजना विरोधी तर्क को प्रशासन भलीभांति समझ ले और इसका प्रस्ताव स्थगित करने हेतु शासन को सूचित कर दे। इसी मांग को ध्यान में रखकर ग्रामीणों ने जिलाधिकारी के माध्यम से माननीय प्रधानमंत्री तथा उत्तराखंड के मुख्यमंत्री को ज्ञापन भी भिजवाया था। ज्ञापन में लिखा गया है कि इस क्षेत्र में जितनी भी सिंचाई नहरें हैं, इनसे बिजली बनाने के लिए राज्य सरकार को ग्रामीणों का सहयोग करना चाहिए। वास्तव में यदि ग्रामीणों की मांग पर गौर किया जाय तो भिलंगना ब्लॉक जिसकी आबादी लगभग 1 लाख से भी कम है, यहां कुल 6 मेगावाट बिजली की ही आवश्यकता है, जिसे केवल धर्मगंगा के सिरहाने पर 13 किमी के अंतर्गत मौजूदा 6 सिंचाई नहरों से ही उत्पादित किया जा सकता है। यह बात जिलाधिकारी के समक्ष भी उठायी गयी है।

सन् 2002 में धर्मगंगा में भयानक बाढ़ आयी थी, जिसके कारण अगुण्डा गांव में 1 दर्जन लोग मरे थे। दुख की बात यह है कि इस भयानक बाढ़ एवं भूस्खलन की घटना के बाद भी प्रस्तावित जल विद्युत परियोजना के निर्माण करने की साइड भी यहीं से चयन की गयी है। यहां लोग इस बात के लिए पहले ही जागरूक हैं कि छोटी पनबिजली से स्थानीय लोगों को अधिक लाभ है, और बड़ी सुरंग आधारित परियोजना से उनकी खेती, जंगल, चरागाह, सिंचाई नहरें आदि बर्बाद होती हैं। उन्हें यह जानकारी उत्तराखंड प्रदेश में चलायी जा रही नदी बचाओ की मुहिम हो या गंगा बचाने के लिए देशभर में हुए प्रचार-प्रसार के कारण यह जागरूकता आयी है। विनाशकारी परियोजना विरोधी जागरूकता केवल इतने ही तक सीमित नहीं है बल्कि इस क्षेत्र में पहले बिहारीलाल जैसे समाजसेवी द्वारा एक छोटी नहर से बिजली बनाकर 20 वर्ष पहले उदाहरण प्रस्तुत किया जा चुका है। इसके बाद जखाणा और अगुण्डा में इंजीनियर योगेश कुमार ने ग्रामीणों का साथ देकर 40-40 किलोवाट की बिजली परियोजनाएं बनायी हैं। इस तरह के उदाहरण जिस क्षेत्र में लोगों ने तैयार किये हों, वहां बाहर से आकर कोई कंपनी कह दे कि बिजली बनाकर लोगों का विकास कर देगी, भला उनकी इस बात को कौन सुनने वाला है।

इस क्षेत्र के विधायक भी इसी सोच को बढ़ावा देते रहे हैं। पूर्व विधायक बलवीर सिंह नेगी हमेशा से ही छोटी पनबिजली परियोजनाओं के ही समर्थक रहे हैं। छोटी पनबिजली का लोक विज्ञान यहां के गांव वालों ने नई टिहरी में जाकर 31 जुलाई को जिलाधिकारी को समझा दिया था। जिलाधिकारी डॉ. रंजीत कुमार सिन्हा पंचायत प्रतिनिधियों की इस बात से पूर्ण संतुष्ट नहीं हुए, उन्होंने आश्वासन दिया कि वे अगुण्डा गांव में आकर ग्रामीणों को परियोजना के समर्थन में संतुष्ट कर देंगे। क्योंकि जिलाधिकारी ने कहा कि राज्य सरकार बिजली बनाकर प्रदेश का हित करना चाहती है। उन्होंने कहा कि वे विरोधी रुख को गांव में आकर समझेंगे।

जिलाधिकारी और ग्रामीणों के विचार में यही अंतर लगता है कि बिजली पैदा करने का अर्थ ही यह है कि राज्य सरकार को माला-माल बनाना और ग्रामीण तो उजड़ते रहते हैं। इस प्रकार लोगों की चिन्ता जिलाधिकारी से मिलने के बाद गांव को बचाने की अधिक सताने लगी। इसी दिन 31 जुलाई को ही नई टिहरी में पत्रकारों के समक्ष भी पंचायत प्रतिनिधियों ने परियोजना के विनाशकारी पक्ष को रखा है। ग्रामीणों ने बांध विरोध के लिए ग्राम स्वराज्य समिति का गठन किया है। इस समिति का संयोजक जयप्रकाश राणा को बनाया गया है और प्रत्येक ग्रामसभा का प्रधान इसमें अपने-अपने ग्राम स्तर के लिए संयोजक के रूप में काम करते हैं।

झाला-कोटी जल विद्युत परियोजना के विरोध का केन्द्र अगुण्डा गांव है। इसके आसपास कोटी, तितरूणा, रगस्या, थाती, आगर आदि गांव हैं। नदी बचाओ अभियान की ओर से जब उनसे परियोजना की डीपीआर मांगी तो उन्होंने बहुत आना-कानी के बाद लगभग 300 पेज वाली डीपीआर अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध करवायी। इस डीपीआर को हिन्दी भाषा में उपलब्ध करवाने के लिए कंपनी से लोगों ने मांग की। अब तक इस डीपीआर का जितना भी अध्ययन किया गया है, वह पूर्ण रूप से फर्जी और मनगढ़ंत तरीके से परियोजना क्षेत्र की स्थिति को समझे बिना तैयार हुई है। परियोजना डीपीआर में इस क्षेत्र में आयी बाढ़ का कोई इतिहास नहीं है। पानी की उपलब्धता के आंकड़े मौजूदा हालात से मेल नहीं खाते। इस क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इसके बारे में कोई विवरण नहीं है। परियोजना की साइट झाला से अगुण्डा की ओर है और इसका नाम झाला-कोटी रखा गया है। ऐसे कई फर्जी उदाहरण डीपीआर में हैं। परियोजना निर्माण के बाद उत्पादित बिजली से स्थानीय

लोगों को कोई लाभ नहीं मिलेगा। इसकी कुल लागत का 12 प्रतिशत रायल्टी राज्य सरकार को भुगतान होनी है तथा शेष बिजली की खपत कंपनी के अपने मुनाफे के रूप में की जानी है।

यह क्षेत्र घनसाली विधानसभा क्षेत्र के अंतर्गत आता है। यहां के भाजपा विधायक भीमलाल आर्य कहीं भी ग्रामीणों के छोटे-बड़े आंदोलनों को सहयोग देते रहे हैं। विधायक ने भी इस बीच अगुण्डा गांव के आसपास के गांवों में जाकर ग्रामीणों के साथ परियोजना का विरोध प्रारंभ किया है। जिलाधिकारी से ग्रामीणों की मुलाकात के बाद विधायक इतने सक्रिय हो गये कि 28 अगस्त को जब झाला-कोटी परियोजना की सर्वे टीम को अगुण्डा के ग्रामीणों ने बंधक बना लिया था, तो विधायक ने तहसीलदार घनसाली के माध्यम से ग्रामीणों का पक्ष लेकर सर्वे टीम को वापस बुलवा लिया। उन्होंने सर्वे टीम को यह भी हिदायत दी कि बिना गांव की अनुमति के वे गांव में प्रवेश नहीं करेंगे। सर्वे टीम ने भी गांव वालों को लिखकर दिया कि वे गांव वालों की अनुमति के बिना गांव में प्रवेश नहीं करेंगे।

झाला-कोटी जल विद्युत परियोजना का विरोध करने वाले गांव वालों को कोई न कोई नैतिक सहारा चाहिए था, एक तरफ जहां विधायक स्वयं ही उनके पक्ष में खड़े हो गये, दूसरी ओर नदी बचाओ अभियान, उत्तरकाशी की टीम ने जमकर ग्रामीणों के साथ विरोध दर्ज किया है। इसके कारण प्रभावितों को विरोध का जायज रास्ता साफ दिखाई देने लगा है।

इसी दौरान उपजिलाधिकारी घनसाली ने भी 6 सितंबर को टिहरी के जिलाधिकारी के परियोजना प्रभावित क्षेत्र में पहुंचने की सूचना दे डाली। लोगों में काफी सुगबुगाहट थी कि जिलाधिकारी उनकी बात सुनकर परियोजना को यहां से हटा देंगे। प्रभावित गांव के लोगों ने विधायक भीमलाल आर्य के साथ मिलकर एक रणनीतिक योजना पर पहले ही हस्ताक्षर कर दिये थे, जिस पर प्रस्तावित परियोजना से प्रभावित अगुण्डा गांव की ग्रामप्रधान मीना देवी, कोटी के ग्रामप्रधान दिनेश भट्ट, थाती के ग्रामप्रधान सुन्दरनाथ, रगस्या के ग्रामप्रधान पन्नालाल, तितरूणा के ग्रामप्रधान कीर्ति सिंह रावत के हस्ताक्षरों के अलावा विधायक ने भी अपना समर्थन देकर जिलाधिकारी को 6 सितंबर की बैठक में बैठते ही पत्र सौंप दिया। इस पत्र में परियोजना को ग्रामीणों ने पूर्ण रूप से नकार दिया। जिलाधिकारी के साथ प्रभागीय वनाधिकारी, अधिशासी अभियंता, सिंचाई, पॉवर कॉरपोरेशन, परियोजना प्रबंधक उरेड़ा, खंड विकास अधिकारी, भिलंगना, तहसीलदार घनसाली, उपजिलाधिकारी आदि कई अधिकारी गांव में जन सुनवाई करने आये थे, जिसे लोगों ने सुनने से इनकार कर दिया था।

इस घटना से जिलाधिकारी डॉ. रंजीत कुमार सिन्हा को अगुण्डा आना काफी नागवार लगा। उन्हें विधायक जैसे जन प्रतिनिधि के पत्र में तमाम प्रतिनिधियों के हस्ताक्षर नाकाफी लगे, इसी बीच उन्होंने बैठक में उपस्थित लगभग 400 लोगों को बताये बिना प्रस्तावित परियोजना स्थल तक अपनी गाड़ी को घुमाने लगे, जिसका ग्रामीणों ने डटकर विरोध किया। उपस्थित गांव वालों ने सड़क पर बैठकर डीएम साहब की गाड़ी आगे नहीं बढ़ने दी, ग्रामीण तब तक सड़क पर बैठे रहे जब तक वे वापस नहीं गये। लोगों ने यह सब काम शांतिपूर्ण तरीके से किया। सुरेश भाई ने मौका स्थल पर ही जिलाधिकारी को कहा कि जब क्षेत्र के प्रतिनिधि लिखकर दे रहे हैं तो यह काम जबरदस्ती कैसे हो सकता है? जिलाधिकारी ने इस बात पर गौर किया। उन्होंने प्रेस के सामने इस घटना के बाद कह दिया कि जो लोग चाहेंगे वही होगा। अंत में यहां ग्रामीणों को एक बड़ी जीत हासिल हुई, जिसमें जिलाधिकारी ने यहां उपस्थित पत्रकारों को यह भी बताया कि वे ग्रामीणों की भावनाओं को शासन तक पहुंचायेंगे।

उत्तराखंड में इस तरह की विनाशकारी बिजली परियोजनाओं का पहले से विरोध हो रहा है, यह पहला आंदोलन है जहां विधायक भी अपने क्षेत्र के प्रभावितों की मदद करने आगे आये हैं। इस क्षेत्र के ग्रामप्रधानों ने भी एक मिसाल कायम कर दी है। वे भविष्य में बांध बनाने वाली किसी भी कंपनी को अनुमति नहीं देंगे। यह निर्णय उन्होंने ग्राम स्तर पर कर दिया है। उनके इस निर्णय से निर्माण कंपनी भी गांव छोड़ चुकी है। ❑

मेरा अपना एक जीवन-दर्शन है

मैंने अपने बारे में तरह-तरह के वर्णन पढ़े हैं। कुछ में मुझे संत कहा गया है, कुछ में धूर्त। मैं न संत हूं और न धूर्त। मैं जो कुछ बनना चाहता हूं और आशा है कि जो कुछ बनने में किसी हद तक मैं सफल हो पाया हूं, वह एक सच्चा और ईश्वर से डरने वाला आदमी। लेकिन मैं अपने बारे में जो कुछ पढ़ता हूं, उससे मुझे कोई नाराजगी नहीं होती। क्यों होनी चाहिए? मेरा अपना एक जीवन-दर्शन है और अपना काम है। प्रतिदिन मैं कुछ देर चरखा चलाता हूं। चरखा चलाते हुए मैं सोचता भी हूं। मैं बहुत-सी बातों के सम्बन्ध में सोचता हूं। लेकिन उन विचारों से मैं कटुता को बराबर दूर ही रखने की कोशिश करता हूं।

–महात्मा गांधी

रपट

नई तालीम पाठ्यक्रम कार्यशाला सम्पन्न

नई तालीम समिति, सेवाग्राम द्वारा गांधी बिरादरी एवं शिक्षा के क्षेत्र में नई तालीम की अवधारणा से जुड़े समान विचारधर्मी संस्थाओं के मिले-जुले प्रयास से मौजूदा शिक्षा व्यवस्था के माध्यम से देश के वर्तमान हालातों को बदलने के लिए शिक्षा पाठ्यक्रमों के जरिये स्कूली बच्चों को जीवन की शिक्षा प्रदान करने के लिए एक सार्थक कदम उठाया जा रहा है। इसमें शैक्षिक पाठ्यक्रमों के जरिये, शांति, अहिंसा, स्वावलंबन, प्रेम, सद्भाव के विचारों के साथ-साथ रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रति रुचि एवं समझ पैदा की जायेगी। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 (एनसीएफ) में भी इन्हीं पहलुओं का उल्लेख किया गया है तथा काम और शिक्षा के आधार पत्र में नई तालीम शिक्षा की पुनर्स्थापना तथा विभिन्न शैक्षिक गतिविधियों द्वारा बच्चों को जीवन की सच्ची शिक्षा प्रदान करने पर जोर दिया गया है।

इसी परिप्रेक्ष्य में नई तालीम समिति, सेवाग्राम, वर्धा (महाराष्ट्र) की अगुवाई में नई तालीम की अवधारणा के अनुरूप शैक्षिक पाठ्यक्रम-निर्माण प्रक्रिया विकसित करने के उद्देश्य से दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन 23 व 24 जून, 2013 को सेवाग्राम में किया गया। इस कार्यशाला में पहली से 12वीं तक बच्चों के लिए एन.सी.आर.टी. द्वारा तैयार की गयी पाठ्यपुस्तकों में नई तालीम से जुड़े मुद्दों को शामिल किये जाने पर गहन विचार-विमर्श किया गया। गांधीजी द्वारा प्रणीत नई तालीम की अवधारणा को व्यापक रूप से पाठ्यपुस्तकों का हिस्सा बनाने के साथ केन्द्रित शिक्षा की गतिविधियों को पठन-पाठन की प्रक्रिया का हिस्सा बनाये जाने हेतु आगामी नवंबर माह में गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद एवं अजीम प्रेमजी फाउण्डेशन के सहयोग से छः दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया जायेगा। इस कार्यशाला में देशभर के लब्ध प्रतिष्ठित शिक्षाशास्त्रियों, गांधी-विचारकों, नई तालीम शिक्षण से जुड़े शिक्षकों, पाठ्यक्रम निर्माण विशेषज्ञों सहित वैकल्पिक शिक्षा के काम में संलग्न संस्थाओं के प्रतिनिधियों आदि को आमंत्रित किया जायेगा।

राष्ट्रीय कार्यशाला की रूपरेखा तैयार करने के संदर्भ में सेवाग्राम में सम्पन्न दो दिवसीय कार्यशाला में नई तालीम से संबंधित दस विषय-वस्तुओं का चिह्नांकन किया गया है तथा पाठ्यक्रम निर्माण कार्यशाला में इन मुद्दों पर केन्द्रित काम आधारित गतिविधियों के मॉडल निर्माण किये जायेंगे।

कार्यशाला में नई तालीम की अवधारणा पर आधारित देशभर में वैकल्पिक शिक्षा के तहत विद्यालयों के प्रचलित शैक्षिक पाठ्यक्रमों का भ्रमण कर पाठ्यक्रमों का संकलन किया जायेगा, जिसके आधार पर व्यापक रूप से समग्र शैक्षिक पाठ्यक्रम निर्माण किये जाने पर सोच-विचार किया जायेगा।

कार्यशाला के प्रारम्भ में नई तालीम समिति के अध्यक्ष डॉ. सुगन बरंठ ने कहा कि पिछले नवंबर में नई तालीम सम्मेलन के दौरान नई तालीम के उद्देश्यों के अनुरूप कार्यरत संस्थाओं को एकसूत्र में पिरोने एवं नियमित रूप से संवाद किये जाने की जरूरत महसूस की गयी थी तथा नई तालीम के कामों को पुनर्स्थापित करने के लिए चार कमिटियों का गठन किया गया था। इसमें से एक समिति पेडागाजी एवं करिकूलम निर्माण की बनायी गयी थी। इन समितियों के सदस्यों का काम महत्त्वपूर्ण है, जिसके माध्यम से आने वाले समय में स्कूलों में ऐसे पाठ्यक्रमों को लागू करने में मदद मिल सकेगी। उन्होंने कहा कि इसका उद्देश्य समतामूलक और हिंसा रहित समाज का निर्माण करना है। नई तालीम समिति के सचिव प्रदीप दासगुप्ता ने अपेक्षा व्यक्त की कि सबके सम्मिलित प्रयास से एक बेहतर करिकूलम आने वाले समय में तैयार हो सकेगा ताकि राज्य सरकारों से चर्चा कर इसे व्यापक रूप से स्कूलों में क्रियान्वित करने पर जोर दिया जायेगा। अजीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी के श्री सुजीत सिन्हा ने कहा, नई तालीम के कामों को स्थापित करने के लिए रिसोर्स पूल बनाने की जरूरत है।

दो दिवसीय कार्यशाला में शिक्षा संस्थानों एवं वैकल्पिक स्कूलों का अध्ययन और उनके कामों को दस्तावेजीकरण करने का निर्णय लिया गया। कार्यशाला में एनसीएफ-2005, मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा अधिनियम 2009, एनसीईआरटी तथा नई तालीम के पहलुओं को लेकर परिचर्चा की जायेगी। तालीम नेट की सुश्री नायला ने कार्यशाला में कहा कि नई तालीम की होने वाली करिकूलम कार्यशाला के लिए दस्तावेजों को पूर्व में तैयार कर भेजा जाना चाहिए ताकि विशेषज्ञ अध्ययन करके अपने अनुभवों से लाभान्वित कर सकेंगे तथा एक उपयोगी अभ्यासक्रम का निर्माण करने में मदद मिल सकेगी। एनसीएफ-2005 के दस्तावेजों में नई तालीम के परिप्रेक्ष्य में व्यापक समीक्षा कर एक नोट तैयार किया जाना चाहिए।

कार्यशाला में पूर्व कुलपति डॉ. करुणाकरन, नई तालीम स्कूल आनंद निकेतन, सेवाग्राम की सुषमा शर्मा, विज्ञान आश्रम, पूना के योगेश कुलकर्णी, बायफ संस्था के राजश्री, सामाजिक कार्यकर्ता एवं फिल्म निदेशक शिल्पा, अजीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी, बंगलौर की इंदिरा, सिद्धार्थ कुमार जैन, हिन्दी विश्वविद्यालय के पंकज सिंह आदि अनेक प्रतिनिधियों के अलावा नई तालीम समिति के वरिष्ठ पदाधिकारी भी सम्मिलित हुए।

–डॉ. सुगन बरंठ

गतिविधियां एवं समाचार

मध्य प्रदेश सर्वोदय मंडल का पुनर्गठन : मध्य प्रदेश सर्वोदय मंडल के पुनर्गठन हेतु 22-23 जून, 2013 को गांधी भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल में सर्वोदय मंडल की बैठक का आयोजन किया गया। पहले दिन उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता दुर्गा प्रसाद आर्य ने की तथा मुख्य अतिथि सर्वोदय समाज के संयोजक डॉ. एस. एन. सुब्बाराव उपस्थित रहे। अपने उद्‌बोधन में सुब्बारावजी ने नक्सली समस्या के रचनात्मक समाधान हेतु प्रयास करने पर बल दिया। उपस्थित लोकसेवक एवं सर्वोदय मंडलों के जिलाध्यक्ष तथा सर्वोदय मित्र ने अपने-अपने जिले में सर्वोदय मंडल द्वारा की जा रही कार्य की रपट प्रस्तुत की। दूसरे सत्र में प्रदेश में संगठन को मजबूत बनाने की दृष्टि से विचार-विमर्श किया गया और कार्यक्रम की रूपरेखा पर चर्चा के बाद हर संभाग के लिए कार्यक्रम तय किये गये।

23 जून को सर्व सेवा संघ की अध्यक्षा सुश्री राधाबहन भट्ट की अध्यक्षता में कार्यक्रम प्रारंभ हुआ। उत्तराखंड की प्राकृतिक आपदा पर विशेष मंथन किया गया। पर्यावरण संकट और आपदा के अंतर्संबंध पर राधा भट्ट ने विस्तार से तथ्य सहित विचार प्रस्तुत कीं।

तत्पश्चात् दुर्गा प्रसाद आर्य, रामचन्द्र भार्गव, एस. एन. सुब्बाराव, राधा भट्ट एवं लोकसेवक तथा सर्वोदय मंडल के जिलाध्यक्षों की उपस्थिति में नये प्रदेश सर्वोदय मंडल के पुनर्गठन की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। अध्यक्ष के रूप में संजय सिंह का नाम प्रस्तावित हुआ, सर्वसम्मति से प्रदेश अध्यक्ष के रूप में संजय सिंह के नाम की घोषणा की गयी। उपस्थित वरिष्ठजनों ने सूत की माला पहनाकर नये अध्यक्ष का स्वागत किया।

राधाबहन भट्ट ने कहा कि सर्वसम्मति से आप एक नौजवान को अध्यक्ष चुना, इससे मैं बेहद खुश हूं और आशा करती हूं कि प्रदेश का संगठन ज्यादा मजबूत होगा। निवर्तमान अध्यक्ष दुर्गाप्रसाद आर्य का आभार व्यक्त करते हुए कहा कि दुर्गा प्रसादजी बिना थके इस उम्र में सर्वोदय मंडल का जो काम किया वह अतुलनीय है। एस.एन. सुब्बाराव ने अपने आशीर्वचन में कहा कि प्रदेश सर्वोदय मंडल की एकजुटता के साथ काम को आगे ले जाना है। नौजवानों को काम की जिम्मेदारी लेनी होगी।

प्रदेश में संगठन को सशक्त करने की दृष्टि से एक टीम बनायी गयी। अंत में अध्यक्ष संजय सिंह ने कहा कि जो जिम्मेवारी आपलोगों ने मुझे सौंपी है उसका पूरा निर्वाह करने की कोशिश करेंगे। प्रदेश का क्षेत्रफल विशाल है, जिला स्तर पर संगठन खड़ा करना मेरी पहली प्राथमिकता होगी तथा रचनात्मक कार्यक्रम और संघर्षात्मक कार्यक्रमों को साथ लेकर चलेंगे। आशा है, आप सबके सहयोग से प्रदेश में संगठन मजबूत होगा।

बैठक में तय हुआ कि प्रदेश का कार्यालय गांधी भवन, भोपाल में फिर से शुरू किया जाय। लालसिंह गौर कार्यालय की जिम्मेदारी संभालेंगे। अंत में दुर्गाप्रसाद आर्य ने आभार प्रकट किया और बैठक समाप्त हुई। **–संजय सिंह**

जैविक कृषि प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न : गांधी स्मारक निधि, छतरपुर (मध्य प्रदेश) में 26 से 29 जुलाई, 2013 को सजीव किसानों के लिए जैविक कृषि प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। डॉ. भारतेन्दु प्रकाश ने कहा कि सजीव कृषि आज किसानों के लिए अंतिम विकल्प है। इस प्रशिक्षण में सजीव कृषि के व्यवहारिक एवं सैद्धांतिक दोनों पक्षों का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। उड़ीसा से आये शिशिर पारीजा ने बताया कि किसान कैसे बिना खर्च के खेती कर सकते हैं। कंपनी की लूट से बचने का एक ही रास्ता है सजीव कृषि। गांधीजी ने भी किसानों के उद्धार की बात करते हुए सेवाग्राम आश्रम में जैविक कृषि पर अनेक प्रयोग किये थे। हरियाणा से आये किसानों ने जैविक कृषि के चमत्कारिक अनुभव बांटे। शिविर में प्रायोगिक कार्य किये गये जिसमें संजीवक, पंचगव्य, नॉडेप कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट आदि के प्रयोग के विषय में विस्तार से जानकारी दी गयी। हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस के भूतपूर्व डीन डॉ. ओमप्रकाश श्रीवास्तव ने भूमि/मिट्टी- संरचना, मिट्टी का स्वास्थ्य, प्राकृतिक तरीकों से मिट्टी को सबल बनाने के तरीकों के संबंध में आधारभूत जानकारी दी। डॉ. ईश्वरचन्द्र श्रीवास्तव ने कृषि अर्थनीति पर कहा कि सरकार विभिन्न प्रकार के अनुदान जो अलग-अलग तरीके से दे रही है वह जैविक कृषि पर लागू करना होगा जिससे कृषि, भूमि, किसान सब स्वस्थ रहेंगे। इसके पश्चात् किसानों द्वारा अपने सफल प्रयोग के अनुभव बांटे गये।

दोपहर के सत्र में शिशिर पारीजा एवं डॉ. भारतेन्दु प्रकाश ने बीज, पारम्परिक बीजों की उपलब्धि, समस्याएं तथा जी.एम. बीजों के खतरों के विषय पर एक पूरा सत्र आयोजित किया। स्वस्थ बीज कैसे बना सकते हैं, इस पर प्रशिक्षण दिया गया।

शिविर के दौरान साहित्य स्टाल भी लगाया गया। अंतिम दिन देश के प्रमुख सफल जैविक कृषि वैज्ञानिक दीपक सचदे ने प्रशिक्षण दिया। अमृत कृषि विज्ञान के जनक श्री सचदेजी ने कहा, ''वातावरण में बदलावों के अनुरूप तुलनात्मक रूप से कम जगह एवं कम पानी में आसपास प्राकृतिक संसाधनों का इस्तेमाल करते हुए वैज्ञानिक तरीकों से खेती करना ही अमृत कृषि है। इसका लक्ष्य है पर्यावरण की सुरक्षा और किसान परिवार की समृद्धि। खेती के पुराने व नये प्राकृतिक तरीकों एवं नये वैज्ञानिक तरीकों के मिश्रण से यह विधि बनायी गयी है। खेती की यह पद्धति पर्यावरण और मानव समाज को साथ-साथ समृद्ध करती है। व्यक्ति को आर्थिक व सामाजिक समानता, समृद्धि एवं स्वतंत्रता प्रदान करती है।'' दीपकजी ने अमृत कृषि क्यों? कौन कर सकता है? कहां से शुरू करें तथा सूत्र विस्तार से सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक सत्र द्वारा जानकारी प्रदान की। शिविर में हरियाणा, पंजाब, उत्तराखंड, बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उड़ीसा आदि राज्यों से 70 से अधिक किसानों ने चार दिन गांधी आश्रम में रहकर प्रशिक्षण प्राप्त किया।

शिविर में बीज, खाद, स्वावलंबन तथा भूमि स्वस्थ बनाने का विशेष प्रशिक्षण दिया

गया। ईश्वरचन्द्र श्रीवास्तव ने कृषि की सामाजिक और आर्थिक विषय पर बात रखी। शिविर के दौरान जैविक भोजन उपलब्ध कराया गया। जैविक कृषकों ने भी अपने सफल अनुभव रखे। फिल्म के जरिये खेती के विभिन्न पहलुओं पर गहराई से प्रशिक्षण दिया गया।

शिविर प्रातः 6 बजे से प्रारंभ होकर शाम तक चला, जिसमें अलग-अलग सत्र के अलावा श्रमदान, प्रार्थना, सांस्कृतिक कार्यक्रम शामिल रहे। मूल्यांकन के दौरान इस तरह के शिविर का आयोजन हर राज्यों में किया जाय, ऐसी आम राय रही। शिविर के अंत में प्रमाण-पत्र वितरित किया गया।

संचालन डॉ. भारतेन्दु प्रकाश व संजय सिंह तथा आभार प्रकट दुर्गा प्रसाद आर्य ने किया। **–संजय सिंह**

नर्मदा घाटी की डूब गैरकानूनी :

हर साल की तरह इस साल भी नर्मदा घाटी के बड़े बांधों से कहीं रुका हुआ, तो कहीं छोड़ा गया पानी, महाराष्ट्र के नंदूरबार तथा मध्य प्रदेश के अलिराजपुर, बड़वानी और धार जिलों में गैरकानूनी डूब का कारण बन गया। 2 अगस्त तक सरदार सरोवर के डूब क्षेत्र में, सरदार सरोवर के कारण तथा ओंकारेश्वर बांध के 23 गेट्स एक साथ खोलने से जो डूब आई है, उससे नंदूरबार जिले के चिमलखेड़ी, बामनी, डनेल जैसे गांव के गांव, पीछे पहाड़ होते हुए, नदी का जल स्तर 129 मीटर तक मानो समुंदर से घिरे हुए, बामणी गांव मानो टापू बन चुका है।

पश्चिम निमाड़ के धार जिले के निसरपुर, चिखल्दा, करोंदिया, खापरखेड़ा आदि गांवों में पिछले साल की तरह फिर से सैकड़ों एकड़ जमीन और खड़ी फसल डूब में आयी है, जबकि उस पर अपनी आजीविका चलाने वाले विस्थापित किसानों को वैकल्पिक जमीन के साथ पुनर्वास का हक मिलना अभी बाकी है। महाराष्ट्र या मध्य प्रदेश के पहाड़ी गांवों के जिन आदिवासियों की जमीन 1994 से डूब प्रभावित होती गयी, उनका पुनर्वास भी बाकी है। इनकी जमीन डूबाना भी नर्मदा जल विवाद न्यायाधिकरण और सर्वोच्च अदालत के फैसलों की अवमानना है।

महाराष्ट्र शासन ने मध्य प्रदेश और गुजरात की यह साजिश कि डूब से ही लोगों को उजाड़ने या उजड़ने हेतु मजबूर करें, इसके खिलाफ केन्द्रीय प्राधिकरण के समक्ष भी आवाज नहीं उठाना बिलकुल गलत है। ऊपरी क्षेत्र के बांधों से पानी छोड़ना है तो मई महीने में क्यों नहीं? यह सवाल महाराष्ट्र का मध्य प्रदेश और केन्द्रीय प्राधिकरण से करना जरूरी है। करीबन 48 हजार परिवार डूब क्षेत्र में होना और 5 हजार से अधिक परिवारों को जमीन देना व ढूंढना भी महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश के लिए एक चुनौती है।

घाटी के लाखों लोग आज भी सर्पदंश, अन्य आपदाओं, डूब से नुकसान का सामना करते हुए भी डटे हैं और डटे रहेंगे, उनकी यह नियति है। गुजरात के दबाव में और मध्य प्रदेश-गुजरात के गठबंधन के कारण बांध को आगे बढ़ाते हुए, लाखों लोगों को डूब की भेंट चढ़ाने के बारे में मध्य प्रदेश चुप है। मध्य प्रदेश अपने राज्य के किसान, मजदूर, मछुआरे, केवट, कुम्हार के हितों को गुजरात के साथ उसके दलीय हित संबंधों से जोड़ना निन्दनीय है। महाराष्ट्र संवेदनहीन और राजनीतिक दृष्टि से निष्क्रिय है। विस्थापितों को हर मोर्चे पर लड़ना पड़ रहा है और आगे भी पड़ेगा। देश के संवेदनशील नागरिक और आंदोलन के समर्थक साथियों को राज्य व केन्द्र शासन को पत्र लिखकर सवाल करना जरूरी है।

–मेधा पाटकर

लोक स्वराज्य जन-जागरण यात्रा :

उत्तर प्रदेश में 22 से 26 जुलाई, 2013 तक ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को लोक-स्वराज्य, ग्रामस्वराज्य तथा असली स्वराज से अवगत कराना इस यात्रा का मूल उद्देश्य था।

प्रदेश अध्यक्ष मधुसूदनजी ने अपने पुरुषार्थ से नर्सरी से लेकर आठवें वर्ग तक एक विद्यालय खोला है। विद्यालय में लगभग 200 बच्चे पढ़ते हैं और 10 शिक्षिकायें भी हैं। यह विद्यालय देवरिया नगर से 25-30 किलोमीटर दूर जिला गोरखपुर की ऐतिहासिक भूमि चौरी-चौरा तहसील में है। इसी क्षेत्र में उनके विद्यालय के निकट के गांवों में जन-जागरण कार्य चला।

उपरोक्त अवधि में एक दिन शाम को 5 बजे ग्राम-भैसही रामदत्त विकास खण्ड, ब्रहमपुर में श्री विपिन उपाध्याय ने एक सभा का आयोजन किया। सभा में लगभग 30-35 लोगों जिसमें वकील, डॉक्टर, पढ़े-लिखे किसान तथा युवा शामिल थे। विद्वानों के हिसाब से आज की वैश्विक बिगड़ती परिस्थिति तथा उसके निदान के रूप में, बजाय व्यापारिक वैश्वीकरण के स्थानीयकरण से हुए सभी के जीवन का समग्र विकास हो सकता है, बताया गया। विद्वानों को लगा कि एक नयी बात सामने आयी।

दूसरे दिन शाम को 5 बजे ग्राम-भैसही नरेगा, (विकास खण्ड, ब्रह्मपुर) में डॉ. गौरीशंकर के दरवाजे पर, जो रिटायर्ड वाइस प्रिंसीपल हैं, सभा हुई, जिसमें ज्यादातर किसान जो पढ़े-लिखे भी थे। श्री जयशंकर सिंह तथा श्री श्रवण सिंह ने सभा का संयोजन किया। हमें ग्रामीण शैली से दूर नहीं बल्कि उसके निकट आना चाहिए, उसे समृद्ध करना चाहिए, क्यों कि ग्रामीण शैली में उसे अपनाने से ही पूरे विश्व का कल्याण हुआ है, यह बात व्याख्यान में बताई गई। सभा 2 घंटे चली। श्री मधुसूदनजी ने लोगों से प्रतिक्रिया चाही। इस पर लोगों ने कई सवाल खड़े किये। सवाल—क्या बैठक करने से लोगों की मानसिकता बदल सकती है? उनके इस प्रश्न पर विस्तृत चर्चा हुई। डॉ. गौरीशंकर ने कार्यक्रम को सराहा। सभा में 30-35 लोग शरीक रहे।

अगले दिन शाम को 5 बजे ग्राम-मठिया (विकास खण्ड, ब्रह्मपुर) में प्राथमिक विद्यालय पर सभा हुई। लगभग 30-35 लोग थे। ये सभी प्रत्यक्ष रूप से खेती से जुड़े लोग थे। सभा में युवा वर्ग की संख्या विशेष थी। ग्रामीण संदर्भ में ग्राम स्वराज्य के कार्य-विचार और दर्शन पर प्रकाश डालते हुए उन्हें आज और अभी से कौन-कौन से छोटे एवं सरल कार्य उस लक्ष्य तक पहुंचने के लिए करना चाहिए, यह बताया गया। यह कहा जा सकता है कि इस बार श्री मधुसूदनजी ने विशेष प्रयास किये थे। **–अविनाश चन्द्र**

कविताएं...

उत्तरकाशी में हुई तबाही के बाद...

अब जंगल पहाड़ सड़कें रास्ते
मंदिर भगवान् आस्था विश्वास
वैसे वैसे रह पाएंगे
जैसे तबाही के पहले थे
तबाही सूरत ही नहीं
सीरत भी बदलती है

श्रमिक...

धरती का सारा बोझ
श्रमिकों के कंधों पर टिका है
किसने कहा
शेषनाग ने उठा रखा है धरती को
एक दिन ज़रा कहो श्रमिकों से
कि
थोड़ा सुस्ता लें बतिया लें गपिया लें
काम से छुट्टी पर चले जाएं
तब हिल न जाए यह धरती
और
रुक न जाए धरती का सब कारोबार
तो कहना

मजदूर...

दिन रात मेहनत कर
घर बनाता है
अपना पसीना
पानी की तरह बहाता है
घर के होते ही तैयार
बेघर कर दिया जाता है
वह मजदूर कहलाता है

–डॉ. पद्मजा शर्मा

आँधी

–प्रो. बसंता

चोर डकैत और बेइमान,
ये ही बने हैं आज महान।
गुण्डा, स्मगलर और अपराधी,
इन्हीं की आज चल रही आँधी।
जो जितना अपराध किये हैं,
मर्डर अनेक बारे किये हैं।
टिकट उन्हीं को मिलता आज,
उन्हीं पर है पार्टियों को नाज।
देश लूटते नेता बनकर,
चलते सदा अकड़ कर, तन कर।
प्रजातंत्र यह कैसा अपना,
जिसका हमने देखा सपना।
जनता को जितना ही चूसे,
उनका पैसा पाकेट में ठूसें।
उन्हीं को कहते लोग महान,
वे ही बढ़ाते देश की शान।
रक्षक से भक्षक बन जाते,
सदा भूलते रिश्ते नाते।
कैसी आज हवा बह रही,
जनता आज त्रस्त हो रही।
विदेशों में है देश का पैसा,
नेताओं का त्याग है कैसा।
एक बार जब विधायक बनते,
कई पीढ़ियों की ये सोचते।
धन-दौलत ये खूब बनाते,
सभी लोग हैं शीश झुकाते।
कलियुग के भगवान यही हैं,
उनके लिए तो स्वर्ग यही है।
बड़े शान से चलते-फिरते,
अपना रूप बदलते रहते।
धन्य-धन्य यह भारत देश,
जहां नहीं नेता को क्लेश।

❑ *विभागाध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग, सरदार बल्लभ भाई पटेल महाविद्यालय, भभुआ (कैमूर)-821101 (बिहार)*

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) अशोक भारत (प्रकाशक), सुरभि प्रिन्टर्स, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया वाराणसी से मुद्रित तथा सर्व सेवा संघ-परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001, फोन एवं फैक्स नं. 0542-2440385 से प्रकाशित। संपादक : बिमल कुमार। छपी प्रतियाँ : 1600